सनातन वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में भी वर्णित है समाधिमरण (संथारा)

(जैन धर्मावलम्बियों की संथारा का विरोध करना अनुचित)

शवदाह या देहदान ?

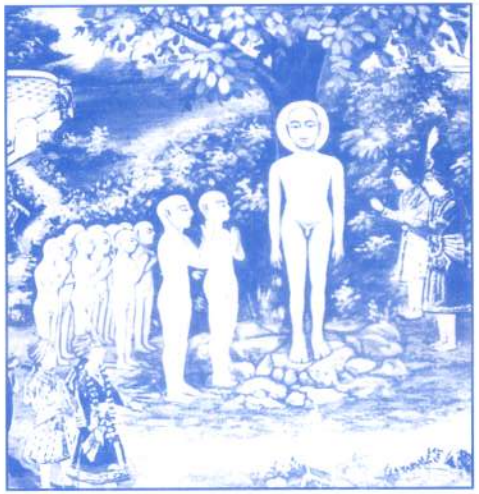

आचार्य कनकनंदी जी गुरुदेव

ग्रन्थ विमोचन

11वीं वैज्ञानिक संगोष्ठी में आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित ग्रन्थों (ग्रन्थांक-178, 179) का विमोचन करते हुए डॉ. जीतूभाई शाह (निर्देशक-जैन विज्ञान केन्द्र) तथा आचार्य कनकनन्दी द्वारा आशीर्वाद प्राप्त दोनों संस्थान के कार्यकर्ता (रामगढ़-2009)

सनातन वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में भी वर्णित है समाधिमरण (संथारा)

(जैन धर्मावलम्बियों की संथारा का विरोध करना अनुचित)

शहदाह या देहदान!

ग्रन्थांक–183

लेखक–आचार्य श्री कनकनंदीजी

प्रथम संस्करण–2009 प्रतियाँ–1000

मूल्य–21/– रु.

–: द्रव्यदाता :–

1. श्रीमती तारादेवी पत्नी श्री जयन्तिलाल जैन, रामगढ़
   पुत्र–संजय, विवेक/पुत्रवधू–रीना जैन
2. तोरावत भँवरलाल रोडजी जैन, रामगढ़
3. श्रीमती प्रेमलता धर्मपत्नी सुशीलचन्द्र जी जैन पुत्र अंकित, बड़ौत (यू.पी.)
4. श्री मुनि सेवा समिति C/o श्री दि. जैन सेनगण मन्दिर, नागपुर
   सुहास, सुनील, पंकज, किरण, आदित्य, डॉ. सुरेश, प्रकाशचन्द्र

यू.जी.सी. द्वारा आचार्य श्री कनकनंदीजी के साहित्यों को मान्यता प्राप्त (शोधकार्य हेतु)

University of Rajasthan, Jaipur

To,
The Head/Director/Principal
Jain Studies, Raj. University
Jaipur

From :
The Registrar,
University of
Rajasthan,
Jaipur

No. RS/179/06

Dated 23.12.2006

Dear Sir/Madam,

With reference to your endorsement on the application of Shri/Miss/Mrs. Sanjeev Kumar for regsistration as a Research Scholar to supplicate for the Ph.D. Degree of the University, I am to inform you that he/she has been permitted by the Vice-Chancellor on behalf of the Syndicate to carry on research on the subject आचार्य कनकनंदी की रचनाओं में चित्रित वैज्ञानिक धर्म दर्शन एवं मनोविज्ञान का समीक्षात्मक अध्ययन under the supervision of Dr. B.L. Sethi, Deptt. of History of your Department/College. Seth Moti Lal College Jhunjhunu.

The date of commencement of research work will be the date on which the Candidate commences work but it should not be earlier than the date of despatch of his application to the University office and no latter than

the date of despatch of this letter and any date between the two. Kindly ask the Candidate to intimate through his/her Supervisor the actual date of commencing his/her research work within Three Months from the date of issue of registration latter, failing which the date of registration will be treated as the date commencement of research work.

Asstt. Registrar (Research)

Notes :-

1. This permission will be deemed to have lapsed after a period of three years unless the Candidates write to the University through his Supervisor for renewing it and the University grants the same.

2. When the thesis likely to be submitted within the next six months, the candidate should submit a brief summary of the thesis on receipt of which action will be taken for appointment of referees.

3. After the thesis is completed, the candidate should supply for printed or type-written copies of the thesis together with a sum of Rs. .... the balance on account of the fee, Prescribed by the University.

4. The language, used in the thesis should be English except in the case of subject connected with an oriental language, where the thesis may, at the option of the candidate be presented in that language. The thesis shall comply with the following condition :-

It must be piece of research work characterised

either by the discovery of fact or by a fresh approach towards interpretation of facts of theories. In either case, it should prove the candidate's capacity for critical examination and sound Judgement. The candidate shall indicate how far the thesis embodies the results of his own investigation and in what respect it appears to him to advance the study of the subject.

It shall also be satisfactory in respect of its literary Presentation.

5. The thesis, when it is submitted should accompanied:-

(i) A candidate by the Supervisor indicating how far the work is the original work of the candidate.

(ii) A certificate from the Principal in case of the candidate who is a student of an affiliated college or from the Supervisor in other case, to the effect that the student resided and worked under the guidance of supervisor for not less than 100 days in each of the two years prceding the submission of this thesis.

6. A report on candidate's work is required to be made by the Supervisor every six months.

No. RS/179/06/8627 dated 23.12.2006

Copy forwarded to :-

1. (Supervisor) Dr. B.L. Sethi, Deptt. of History, Seth Moti Lal College, Jhunjhunu (Raj.).
2. Sanjeev Kumar, D-201, Basant Vihar Jhunjhunu (Raj.).

Asstt. Registrar (Research)

आचार्य श्री कनकनंदीजी के साहित्य पर शोध करने वाले शोधार्थियों को यू.जी.सी. द्वारा आर्थिक अनुदान

University of Rajasthan, Jaipur
(Research Section)

The Head
University Deptt. of Centre for Jain Studies
Jaipur

No.RS/05/JRI-594/ Dated :

Sub. : Converting JRF to SRF in respect of Shri Sanjeev Kumar.

Dear Sir,

Please refer to your endorsament No. .... dated .... on the subject cited above.

In this connection, I am directed to inform you that the amount of fellowship has been enhanced from Rs. 10000/- p.m. to Rs. 12000 p.m. in respect of Shri Sanjeev Kumar w.e.f. 20.4.08 to 19.4.09. His designation has also been changed from JRF to SRF.

Yours faithfully

Asstt. Registrar (Res.)

No.RS/JRF-594/12544 Dated 12.3.09

Copy forwarded for information and necessary action to :-

1. Dr. B.L. Sethi, Deptt. of History, Seth Moti Lal College, Jhunjhunu (Raj.).
2. The A.R. & A.F. (Grant) UOB, Jaipur.
2. Shri Sanjeev Kumar, 56, Vijay House, Gandhi Nagar, D.C.M. Ajmer Road, Jaipur (Raj.).

Asstt. Registrar

डॉ. तातेड़ की भावना–आचार्यश्री के साहित्य का अखिल विश्व में प्रचार–प्रसार करने की

Respected K.C. Jain Sir, Tuesday, May 12.2009
Sadar Jai Jinendra, 11:47 PM

I bow in the feet of Acaryashri. Please pay my highest regard and vandana from core of my heart to Acaryashri. He is spred Lord Mahaveer's preachings in spiritual scientific way in morden context which is demand of the day too. It is a great service to humanity he is rendering through his deep researched literature as well as through his influencive speeches. As we have already talked I shall be reaching Sagvada on 27.05.09. Please visit my following websites regarding my Academic Performance and can be shown to maximum of our close persons so that they can get inspiration to become good academician. I hope you will take keen interest in spreading Jainism.

(1) www.sohanrajtater.com.
(2) www.herenow4u.de-click Glossary-go to alphbet T-Tater, Dr. Sohan Raj.
(3) www.Google.co.in and search-Dr. Sohan Raj Tater

Thanks, with warm regards,
Yours Truely,
Prof. Dr. Sohan Raj Tater
Vice Chancellor, Sighania University

आचार्य श्री कनकनंदीजी को मेरी वन्दना!
आदरणीय डॉ. के.सी. जैन महोदय, सादर जय जिनेन्द्र!

आचार्यश्री के चरणारविन्द में मेरा नमोस्तु! मैं अंतरंग हृदय से आचार्यश्री का सर्वाधिक सम्मान और वन्दना करता हूँ। वे भगवान् महावीर के उपदेशों को आध्यात्मिक–वैज्ञानिक पद्धति से अखिल विश्व में प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। वे गहरी (तलस्पर्शी) साहित्यिक खोज और प्रभावी प्रवचनों के माध्यम से मानवता की बहुत बड़ी सेवा कर रहे हैं।

मैं दिनांक 27.5.09 को सागवाड़ा पहुँच रहा हूँ। कृपया मेरी शैक्षणिक प्रस्तुतियों को मेरी निम्न वेबसाइट पर देखें एवं उसे अपने अधिकतम निकटस्थ लोगों को दिखाएँ, जिससे उन्हें अच्छे शिक्षाविद् बनने की प्रेरणा मिले।

मैं आशा करता हूँ कि आप जैन–धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए अच्छी रूचि रखेंगे।

www.drsohanrajtated.com.

धन्यवाद अभिवादन के साथ,
आपका विश्वासपात्र
प्रो. डॉ. सोहनराज तातेड़
उपकुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय

समाधि भावना

दिन रात मेरे स्वामी, मैं भावना ये भाऊँ।
देहान्त के समय में, तुमको न भूल जाऊँ।।टेक।।
शत्रु अगर कोई हो, सन्तुष्ट उसको कर दूँ।
समता का भाव धरकर, सबसे क्षमा कराऊँ।।1।।
त्यागूँ आहार पानी, औषध विचार अवसर।
टूटे नियम न कोई, दृढ़ता हृदय में लाऊँ।।2।।
जागे नहीं कषायें, नहिं वेदना सतावे।
तुमसे ही लौ लगी हो, दुर्ध्यान को भगाऊँ।।3।।
आतम स्वरूप अथवा, आराधना विचारूँ।
अरहन्त सिद्ध साधु, रटना यही लगाऊँ।।4।।
धरमात्मा निकट हो, चरचा धरम सुनावें।
वो सावधान रखें, गाफिल न होने पाऊँ।।5।।
जीने की हो न वांछा, मरने की हो न इच्छा।
परिवार मित्रजन से, मैं मोह को हटाऊँ।।6।।
भोगे जो भोग पहले, उनका न होवे सुमरण।
मैं राज्य सम्पदा या, पद इन्द्र का न चाहूँ।।7।।
रत्नत्रय का पालन, हो अन्त में समाधि।
'प्रभु' प्रार्थना यही है, जीवन सफल बनाऊँ।।8।।

समाधि का स्वरूप एवं फल

बोधिः समाधि परिणामशुद्धिः,
स्वात्मोपालब्धिः शिवसौख्य सिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने,
त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि।(11) आ. अमितगति

O Goddess, thou art like the jewel Chinta-mani in granting all desired objects. May I, by worshiping thee obtain wisdom, control of mind, purity of thought, realization of my own self, and perfect happiness ever-lasting.

हे माँ सरस्वती देवी! इच्छित पदार्थ को देने में चिन्तामणि के समान आपको वंदन करने वाले मुझे ज्ञान, समाधि, परिणाम, विशुद्धि, स्वात्मा की उपलब्धि मोक्ष सुख सिद्धि होवे।

तस्स भंते! पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स से

सममत्त–मरणं, पंडित–मरणं, वीरिय–मरणं,
दुक्खक्खो, कम्मकखओ, बोहिलाहो,
सुगइ–गमणं, समाहि–मरणं जिन–गुण–सम्पत्ति होउ
मज्झं।

हे भगवन्! उन सब दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ, मैंने उन दोषों का प्रतिक्रमण किया है, मेरा सम्यकत्व मरण, पंडित मरण, वीर मरण, दुखों का क्षय, कर्मों का क्षय, बोधि का लाभ, सुगति गमन, समाधिमरण, जिनेन्द्र गुणों की संपत्ति मुझे प्राप्त हो।

तदेवार्थ मात्र निमसिं स्वरूप शून्यमिव समाधिः।।3।।
(पातंजलि)

वह ध्यान ही जब ध्येय के स्वरूप मात्र का प्रकाशक होते हुए अपने (अर्थात् स्वयं ध्यान के) स्वरूप से शून्य सा हो जाता है तब वह समाधि कहलाती है। अर्थात् ध्यान की पूर्व परिपक्वावस्था ही समाधि कहलाती है। (समाधि सहित मरण ही समाधिमरण है)।

सनातन वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में भी वर्णित है समाधिमरण (संथारा)

(जैन धर्मावलम्बियों की संथारा का विरोध करना अनुचित)

–आचार्य कनकनंदीजी

भारतीय संस्कृति (वैदिक, जैन, बौद्ध) आध्यात्मिक संस्कृति मूलक है जो कि धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष तथा ब्रह्मचर्य–गृहस्थ– वानप्रस्थ–यतिव्रत से सहित है। इसलिए कहा है–

आर्य संस्कृति की यही पहिचान।
जीवन हो ज्योति और मरने पर निर्वाण।।

अतएव भारतीय संस्कृति के अनुयायी केवल स्व–शरीर और शरीराश्रित जन्म–जरा–मरण–हानि–लाभ–पुत्र–मित्र–शत्रु–धन–वैभव आदि को स्व–स्वरूप से नहीं मानता है। "शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्" के अनुसार स्व–आत्मकल्याण के लिए स्व–शरीर का सदुपयोग करता है। एतदर्थ वह शरीर को स्वस्थ रखने के लिये यथायोग्य

प्रयत्न भी करता है। परन्तु जब किसी भी प्रयत्न से शरीर की रक्षा सम्भव नहीं होती तब वह आत्म–कल्याण के लिए शरीर का भी त्याग बिना छोटा एवं खोटा भाव से विधिपूर्वक क्रमशः करता है। जैसे कि पुराना जीर्ण–शीर्ण वस्त्र को मानव त्याग करता है और सर्प पुरानी अयोग्य केंचुली को छोड़ता है।

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रूजायां च निःप्रतीकारे।
धर्माय तनु विमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः।। (१र.श्रा.पृ.222)

उपद्रव को उपसर्ग कहते हैं। यह तिर्यंच, मनुष्य, देव और अचेतनकृत होने से चार प्रकार का होता है। जिसमें अन्न की कमी होने से भिक्षा का मिलना भी कठिन हो जाता है, उसे दुर्भिक्ष कहते हैं। वृद्धावस्था के कारण जिसमें शरीर अत्यन्त जीर्ण हो जाता है उसे जरा कहते हैं, और उपस्थित हुए रोग को रूजा कहते हैं। जब ये चारों वस्तुएँ इस रूप में उपस्थित हो कि उनका प्रतिकार ही न किया जा सके तब रत्नत्रय रुपी धर्म की आराधना के लिए शरीर छोड़ने को सल्लेखना कहते हैं। स्व–पर के प्राणघात के लिए जो शरीर त्याग होता है, वह सल्लेखना नहीं है।

मरणेऽवश्वं भाविनि, कषाय सल्लेखना तनूकरणमात्रे।
रागादिमंतरेण, व्याप्रियमाणस्य नाऽऽत्मघातोऽस्ति।। (177)

अवश्यसभावी मरण में राग, द्वेष, मद, मोहादि के बिना की गई सल्लेखना से पुरुष का आत्मघात नहीं है क्योंकि सल्लेखना में कषाय को क्षीण किया जाता है और जहाँ कषाय का आवेश नहीं है वहाँ आत्महत्या नहीं होती है। तत्त्वार्थ सूत्र में कहा है कि प्रमत्त से प्राण का व्यपरोपण करना हिंसा है। जो पुरुष शुद्ध अन्तःकरण से सल्लेखना करता है उसका प्रमाद का योग नहीं होता है। सल्लेखना युक्त पुरुष राग, द्वेष, काम, मोह, क्रोधादि में प्रवर्तन नहीं करता है। इसलिए उसका आत्मवध नहीं है। रागादि सहित का अशुभ भाव में प्रवर्तन करने वालों का ही आत्मघात होता है अन्य के नहीं।

उपर्युक्त दो श्लोक जैन धर्म के दो प्रसिद्ध प्राचीन ग्रन्थों (1100 से 1900 वर्ष) के देकर निम्न में वैदिक धर्म के प्रसिद्ध प्राचीन ग्रन्थ महाभारत (अनुशासन पर्व–दान धर्म पर्व पृ. 6006 से 6013) से जैसा का तैसा कुछ श्लोक एवं

अनुवाद उद्धृत कर रहा हूँ। विशेष परिज्ञानार्थे जिज्ञासु मेरी (आचार्य कनकनंदी) "अमृत तत्त्व की उपलब्धि के हेतु समाधिमरण" ग्रन्थांक–162 कृति का अध्ययन करें। इस कृति में मैंने राजस्थान उच्च न्यायालय में संथारा (समाधिमरण) के विरुद्ध जनहित याचिका दायर करने वाले निखिल सोनी एवं याचिका की ओर से वकालत करने वाले एडवोकेट माधव मिश्रा के तर्कों के समाधान के लिए जैन, वैदिक, बौद्ध संविधान, कानून के आधार पर सिद्ध किया है कि समाधिमरण आत्महत्या नहीं है वरन् आत्मोद्धार/आत्मकल्याण/आध्यात्मिक समाधि (मोक्ष–मुक्ति भी) है। इस कृति को भारत के सर्वोच्च न्यायालय से लेकर उच्च न्यायालयों में प्रेषित की गई है और मेरे अनेक न्यायाधीश, वकील शिष्यों को मैंने स्व–हस्त से आशीर्वाद रूप में दिया है। संभवतः कुछ लोग समाधि–मरण को आत्महत्या मानकर संवेदना, दया–करुणा, परदुःख कातरता से या अनजान होने के कारण अथवा अन्य धर्म की क्रियाएँ स्वधर्म में अप्रचलित/अप्रसिद्ध/अमान्य होने के कारण या स्वयं को

आधुनिक, प्रगतिशील, उदारवादी, कानूनज्ञ, न्यायपरायण सिद्ध करने के लिए भी सम्यक् आध्यात्मिक प्रक्रियाओं को भी गलत, अन्ध–परम्परा, रूढ़िवादी, पिछड़ापन, अवैज्ञानिक, अतार्किक सिद्ध करते हैं जो कि स्वयं की संकीर्णता, अनुदारता, अज्ञानता की निष्पत्ति/ प्रतिक्रिया/परिणति है। ऐसा भाव भी आध्यात्मिक दृष्टि से आत्महत्या है। क्योंकि ऐसे भाव से आत्मा के निर्मल–पवित्र भावों की हत्या होती है। आवेश, तनाव, चिन्ता, संक्लेश, हताशा, अंधश्रद्धा, क्रोध, मान, माया, लोभ, काम आदि भाव से विवशता से आत्महत्या होती है और समाधि उपर्युक्त भावों को दूर करने के लिए आत्मविश्वास से की जाने से परमसाम्य/परम–अहिंसा/सत्यं शिवं सुन्दरम्/सच्चिदानन्द/ परमामृत है।

तयो स्वभावं नापायं यत्नतः करणोद्भवम्।
एतयोरूभयोर्देवि विधानं श्रृणु शोभने।।

श्री महेश्वर कहते हैं–हे देवी! इन दोनों में जो स्वाभाविक मृत्यु है वह अटल है, उसमें कोई बाधा नहीं है। परन्तु जो

यत्नसाध्य मृत्यु है, वह साधन सामग्री द्वारा सम्भव होती है। शोभने! इन दोनों में जो विधान है, वह मुझसे सुनो।।

कल्याकल्यशरीरस्य यत्नजं द्विविधं स्मृतम्।
यत्नजं नाम मरणमात्मत्यागो मुमूर्षया।।

जो यत्नसाध्य मृत्यु है, वह समर्थ और असमर्थ शरीर से सम्बन्ध रखने के कारण दो प्रकार की मानी गयी है। मरने की इच्छा से जो जान–बूझकर अपने शरीर का परित्याग किया जाता है, उसी का नाम है यत्नसाध्य मृत्यु।

तत्राकल्पशरीरस्य जरा व्याधिश्च कारणम्।
महाप्रस्थानगमनं तथा प्रायोपवेशनम्।।
जलावगाहनं चैव अग्निचित्याप्रवेशनम्।
एवं चतुर्विधः प्रोक्त आत्मत्यागो मुमूर्षताम्।।

जो असमर्थ शरीर से युक्त है अर्थात् बुढ़ापे के कारण या रोग के कारण असमर्थ हो गया है, उसकी मृत्यु में कारण है महाप्रस्थान गमन, आमरण उपवास, जल में प्रवेश अथवा चिता की आग में जल मरना। यह चार प्रकार का देहत्याग

बताया गया है, जिसे मरने की इच्छा वाले पुरुष करते हैं।

शोभने! अब क्रमशः इनकी विधि सुनो–मनुष्य स्व–धर्मयुक्त गार्हस्थ्य–आश्रम का दीर्घकाल तक विधिपूर्वक निर्वाह करके उससे उऋण हो वृद्ध अथवा रोगी हो जाने पर अपनी दुर्बलता दिखा सभी लोगों से गृहत्याग के लिये अनुमति ले फिर समस्त भाई–बन्धुओं को कर्मानुष्ठानों का त्याग करके अपने धर्म कार्य के लिये विधिवत् दान करने के पश्चात् मीठी वाणी बोलकर सब लोगों से आज्ञा ले नूतन वस्त्र धारण उसे कुश की रस्सी से बाँध ले। इसके बाद आचमनपूर्वक दृढ़ निश्चय के साथ आत्मत्याग की प्रतिज्ञा करके ग्राम्यधर्म को छोड़कर इच्छानुसार कार्य करें।

यदि महाप्रस्थान की इच्छा हो तो निराहार रहकर जब तक प्राण निकल न जाये तब तक उत्तर दिशा की ओर निरन्तर प्रस्थान करें। जब शरीर निश्चेष्ट हो जाये, तब वहीं सोकर उस परमेश्वर में मन लगाकर प्राणों का परित्याग कर

दें। ऐसा करने से वह पुण्यात्माओं के निर्मल लोकों को प्राप्त होता है।

प्रायोपवेशनं चेच्छेत् तेनैव विधिना परः।
देशे पुण्यतमे श्रेष्ठे निराहारस्तु संविशेत्।।

यदि मनुष्य प्रायोपवेशन (आमरण उपवास) करना चाहे तो पूर्वोक्त विधि से ही घर छोड़कर परम पवित्र श्रेष्ठतम देश में निराहार होकर बैठ जाये।

आप्राणान्तं शुचिर्भूत्वा कुर्वन् दानं स्वशक्तितः।
हरिं स्मरंस्त्यजेत् प्राणानेष धर्म सनातनः।।

जब तक प्राणों का अन्त न हो तब तक शुद्ध होकर अपनी शक्ति के अनुसार दान करते हुए भगवान् के स्मरणपूर्वक प्राणों का परित्याग करें। यह सनातन धर्म है।

शुभे! इस प्रकार शरीर का त्याग करके मनुष्य स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित होता है। यदि मनुष्य अग्नि में प्रवेश करना चाहे तो उसी विधि से बिदा लेकर किसी पुण्यक्षेत्र में अथवा नदियों के तट पर काठ की चिता बनावें। फिर देवताओं को

नमस्कार और परिक्रमा करके शुद्ध एवं दृढ़निश्चय से युक्त हो श्री नारायण हरि का स्मरण करते हुए ब्राह्मणों को मस्तक नवाकर उस प्रज्ज्वलित चिताग्नि में प्रवेश कर जाये।

ऐसा पुरुष भी यथोचित रूप से उक्त कार्य करके पुण्यात्माओं के लोक को प्राप्त कर लेता है। शुभे! यदि कोई जल में प्रवेश करना चाहे तो उसी विधि से किसी विख्यात पवित्रतम तीर्थ में पुण्य का चिन्तन करते हुए डूब जाये। ऐसा मनुष्य भी स्वभावतः पुण्यतम लोकों में जाता है।

इसके बाद समर्थ शरीर वाले पुरुष के आत्मत्याग की तात्त्विक विधि बताता हूँ, सुनो। क्षत्रिय के लिये दीन–दुखियों की रक्षा और प्रजापालन के निमित्त प्राण त्याग अभीष्ट बताया गया है। योद्धा अपने स्वामी के अन्न का बदला चुकाने के लिये, ब्रह्मचारी गुरु के हित के लिये तथा सब लोग गौओं और ब्राह्मणों की रक्षा के लिये अपने प्राणों को निछावर कर दें, यह शास्त्र का विधान है।

राजा अपने राज्य की रक्षा के लिये, अथवा दुष्ट नरेशों

द्वारा पीड़ित हुई प्रजा को संकट से छुड़ाने के लिये विधिपूर्वक युद्ध के मार्ग पर चलकर प्राणों का परित्याग करें।

जो राजा कवच बाँधकर मन में दृढ़ निश्चय ले युद्ध में प्रवेश करके पीठ नहीं दिखाता और शत्रुओं का सामना करता हुआ मारा जाता है, वह तत्काल स्वर्ग लोक में सम्मानित होता है। सामान्यतः सबके लिए और विशेषतः क्षत्रिय के लिये वैसी उत्तम गति दूसरी नहीं है।

जो भृत्य स्वामी के अन्न का बदला देने के लिए उनका कार्य उपस्थित होने पर अपने प्राणों का मोह छोड़कर उनकी सहायता करता है और स्वामी के लिये प्राण त्याग देता है, वह देव समूहों के लिये स्पृहणीय हो पुण्य लोकों में जाता है। इस विषय में कोई विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार जो गौओं, ब्राह्मणों तथा दीन–दुखियों की रक्षा के लिये शरीर का त्याग करता है, वह भी दया धर्म को अपनाने के कारण पुण्य लोकों में जाता है। इस तरह ये प्राण त्याग के समुचित मार्ग तुम्हें बताये गये हैं।

कामात् क्रोधाद् भयाद् वापि यदि चेत् संत्यजेत् तनुम्।
सोऽनन्तं नरकं याति आत्महन्तृत्व कारणात्।।

यदि कोई काम, क्रोध अथवा भय से शरीर का त्याग करे तो वह आत्महत्या करने के कारण अनन्त नरक में जाता है।

स्वाभाविक मृत्यु वह है, जो अपनी इच्छा से नहीं होती, स्वतः प्राप्त हो जाती है। उसमें जिस प्रकार मरे हुए लोगों के लिये जो कर्त्तव्य है, वह मुझसे विधिपूर्वक सुनो।

उसमें भी जो मरण या त्याग होता है, वह किसी मूर्ख के देहत्याग से बढ़कर है। मरने वाले मनुष्य के शरीर को पृथ्वी पर लिटा देना चाहिये और जब प्राण निकल जाये, तब तत्काल उसके शरीर को नूतन वस्त्र से ढ़क देना चाहिये। भामिनि! फिर उसे माला, गन्ध और सुवर्ण से अलंकृत करके श्मशान–भूमि में दक्षिण दिशा की ओर चिता की आग में उस शव को जला देना चाहिये। अथवा निर्जीव शरीर को वहाँ भूमि पर ही डाल दे।

यस्मिन् यस्मिंश्च विषये यो यो याति विनिश्चयम्।
तं तमेवाभिजानाति नान्यं धर्मं शुचिस्मिते।।

शुचिस्मिते! जो–जो जिस–जिस विषय में निश्चय को प्राप्त होता है, वह–वह उसी–उसी को धर्म समझता है, दूसरे को नहीं।

श्रृणु देवि समासेन मोक्षद्वार मनुत्तमम्।
एतद्धि सर्वधर्माणां विशिष्टं शुभमव्ययम्।।

देवी! तब तुम संक्षेप से परम उत्तम मोक्ष–द्वार का वर्णन सुनो। यही सब धर्मों में उत्तम, शुभ और अविनाशी है।

नास्ति मोक्षात् परं देवि नास्ति मोक्षात् परागतिः।
सुखमात्यन्तिकं श्रेष्ठमनिवृत्तं च तद् विदुः।।

देवी! मोक्ष से उत्तम कोई तत्त्व नहीं है और मोक्ष से श्रेष्ठ कोई गति नहीं है। ज्ञानी पुरुष मोक्ष को कभी निवृत्त न होने वाला, श्रेष्ठ एवं आत्यन्तिक सुख मानते हैं।

नात्र देवि जरा मृत्युः शोको वा दुःखमेव वा।
अनुत्तममचिन्त्यं च तद् देवि परमं सुखम्।।

देवी! इसमें जरा, मृत्यु, शोक अथवा दुःख नहीं है। वह सर्वोत्तम अचिन्त्य परमसुख है।

ज्ञानानामुत्तमं ज्ञानं मोक्षज्ञानं विदुर्बुधाः।
ऋषिभिर्देवसंघैश्च प्रोच्यते परमं पदम्।।

विद्वान् पुरुष मोक्षज्ञान को सब ज्ञानों में उत्तम मानते हैं। ऋषि और देव समुदाय उसे परमपद कहते हैं।

नित्यमक्षरमक्षोभ्यमजेयं शाश्वतं शिवम्।
विशन्ति तत् पदं प्राज्ञाः स्पृहणीयं सुरासुरैः।।

नित्य, अविनाशी, अक्षोभ्य, अजेय, शाश्वत् और शिव स्वरूप वह मोक्षपद देवताओं और असुरों के लिये भी स्पृहणीय है। ज्ञानी पुरुष उसमें प्रवेश करते हैं।

दुःखादिश्च दुरन्तश्च संसारोऽयं प्रकीर्तितः।
शोकव्याधिजरादोषैर्मरणेन च संयुतः।।

यह संसार आदि और अन्त में दुःखमय कहा गया है। यह शोक, व्याधि, जरा और मृत्यु के दोषों से युक्त है।

जैसे आकाश में नक्षत्रगण बारम्बार आते और निवृत्त

हो जाते है, उसी प्रकार ये जीव लोक में बारम्बार लौटते रहते हैं। शुभलक्षणे! उसके मोक्ष का यह मार्ग सुनो। ब्रह्माजी से लेकर स्थावर वृक्षों तक जो संसार बताया गया है, इसमें सभी प्राणी बारम्बार लौटते हैं।

वहाँ संसार–चक्र का ज्ञान के द्वारा मोक्ष देखा जाता है। अध्यात्म तत्त्व को अच्छी तरह समझ लेना ही ज्ञान कहलाता है। प्रिये! उस ज्ञान को ग्रहण करने का जो उपाय है तथा ज्ञानी का जो आचार है, उसका मैं यथावत् रूप से वर्णन करूँगा। तुम एकचित्त होकर इसे सुनो।

समाधि (मोक्ष) के लिये साधना

जो सर्वत्र समान भाव रखते हुए सर्दी–गर्मी और हर्ष–शोक आदि द्वंद्वों को सहन करे, वही मुनि है। भूख–प्यास के वशीभूत न हो, उचित भोगों से भी अपने मन को हटा ले, संकल्पजनित ग्रंथियों को त्याग दे और सदा ध्यान में तत्पर रहे। कुण्डी, चमस (प्याली), छींका, छाता, लाठी, जूता और वस्त्र–इन वस्तुओं में भी अपना स्वामित्व स्थापित न करें। गुरु से पहिले उठे और उनसे पीछे सोये। स्वामी (गुरु) को सूचित किये बिना किसी आवश्यक कार्य के लिये भी न जाये। प्रतिदिन दिन में दो बार दोनों संध्याओं के समय वस्त्र सहित स्नान करें। उसके लिये चौबीस घंटे में एक समय भोजन का विधान है। पूर्वकाल के यतियों ने ऐसा ही किया है।

सर्वत्र भिक्षा ग्रहण करे, रात में सदा परमात्मा का चिन्तन करे, कोप का कारण प्राप्त होने पर भी कभी कुपित न हो।

ब्रह्मचर्य, वनवास, पवित्रता, इन्द्रिय संयम और समस्त प्राणियों पर दया–यह संन्यासी का सनातन धर्म है।

वह समस्त पापों से दूर रहकर हल्का भोजन करे, इन्द्रियों को संयम में रखे और परमात्म चिन्तन में लगा रहे। इससे उसे पापनाशिनी श्रेष्ठ बुद्धि प्राप्त होती है।

जब मन, वाणी और क्रिया द्वारा किसी भी प्राणी के प्रति पापभाव नहीं करता, तब वह यति ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। निष्ठुरता शून्य, अहंकार रहित, द्वंद्वातीत और मात्सर्यहीन यति शोक, भय और बाधा से रहित हो सर्वोत्तम ब्रह्मपद को प्राप्त होता है। जिसकी दृष्टि में निन्दा और स्तुति समान है, जो मौन रहता है, मिट्टी के ढेले, पत्थर और सुवर्ण को समान समझता है तथा जिसका शत्रु और मित्र के प्रति समभाव है, वह निर्वाण (मोक्ष) को प्राप्त होता है।

ऐसे आचरण से युक्त, तत्पर और अध्यात्म चिन्तनशील यति उसी ज्ञानाभ्यास से परमगति को प्राप्त कर लेता है।

अनुद्विग्नमतेर्जन्तोरस्मिन् संसार मण्डले।
शोकव्याधिजरादुःखैर्निवाणं नोपपद्यते।।
तस्मादुद्वेगजननं मनोऽवस्थापनं तथा।
ज्ञानं ते सम्प्रवक्ष्यामि तन्मूलममृतं हि वै।।

इस संसार–मण्डल में जिस प्राणी की बुद्धि उद्वेग शून्य है, वह शोक, व्याधि और वृद्धावस्था के दुःखों से मुक्त हो निर्वाण को प्राप्त होता है। इसलिए संसार से वैराग्य उत्पन्न कराने वाले और मन को स्थिर रखने वाले ज्ञान का तुम्हारे लिए उपदेश करूँगा; क्योंकि अमृत (मोक्ष) का मूल कारण ज्ञान ही है।

शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च।
दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम्।।

शोक के सहस्रों और भय के सैकड़ों स्थान हैं। वे मूर्ख मनुष्य पर ही प्रतिदिन प्रभाव डालते हैं, विद्वान् पर नहीं।

नष्टे धने वा दारे वा पुत्रे पितरि वा मृते।
अहो दुःखमिति ध्यायञ्शोकस्य पदमाव्रजेत्।।

धन नष्ट हो जाये अथवा स्त्री, पुत्र या पिता की मृत्यु हो जाये, तो 'अहो! मुझ पर बड़ा भारी दुःख आ गया।' ऐसा सोचता हुआ मनुष्य शोक के आश्रय में आ जाता है।

नास्ति तृष्णासमं दुःखं नास्ति त्यागसमं सुखम्।
सर्वान कामान् परित्यज्य ब्रह्मभूयाय कल्पते।।

तृष्णा के समान कोई दुःख नहीं है, त्याग के समान कोई सुख नहीं है। समस्त कामनाओं का परित्याग करके मनुष्य ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है।

या दुस्त्यजा दुर्मतिभिर्यान जीर्यतिजीर्यतः।
योऽसौ प्राणान्तिको रोगस्तां तृष्णां त्यजतः सुखम्।।

खोटी बुद्धि वाले मनुष्यों के लिये जिसका त्याग करना अत्यन्त कठिन है। जो मनुष्य के बूढ़े हो जाने पर स्वयं बूढ़ी नहीं होती तथा जिसे प्राणनाशक रोग कहा गया है, उस तृष्णा का त्याग करने वाले को ही सुख मिलता है।

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।।

भोगों की तृष्णा कभी भोग भोगने से शान्त नहीं होती, अपितु घी में प्रज्ज्वलित होने वाली आग के समान अधिकाधिक बढ़ती ही जाती है।

यच्च कामसुखं लोके यच्च दिव्यं महत् सुखम्।
तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हतः षोडशीं कलाम्।।

लोक में जो काम सुख है और परलोक में जो महान् दिव्य सुख है—ये दोनों मिलकर तृष्णाक्षयजनित सुख की सोलहवीं कला के भी बराबर नहीं हो सकते।

इन्द्रियेषु च जीर्यत्सुच्छिद्यमाने तथाऽऽयुषि।
पुरस्ताश्च स्थिते मृत्यौ किं सुखं पश्यतः शुभे।।

शुभे! इन्द्रियाँ सदा जीर्ण हो रही हैं, आयु नष्ट होती चली जा रही है और मौत सामने खड़ी है—यह सब देखते हुए किसी को संसार में क्या सुख प्रतीत होगा?

व्याधिभिः पीडयमानस्य नित्यं शारीरमानसैः।
नरस्याकृतकृत्यस्य किं सुखं मरणे सति।।

मनुष्य सदा शारीरिक और मानसिक व्याधियों से पीड़ित होता है और अपनी अधूरी इच्छाएँ लिये ही मर जाता है। अतः यहाँ कौन सा सुख है?

न धनेन न राज्येन नाग्र्येण तपसापि वा।
मरणं नातितरते विनामुक्त्या शरीरिणः।।

आत्मा की मुक्ति के बिना मनुष्य न तो धन से, न राज्य से और न श्रेष्ठ तपस्या से ही मृत्यु को लाँघ सकता है।

अश्वमेघ सहस्राणि वाजपेयशतानि च।
न तरन्ति जरामृत्यु निर्वाणाधिगमाद् विना।।

सहस्रों अश्वमेघ और सैकड़ों वाजपेय यज्ञ भी मोक्ष की उपलब्धि हुए बिना जरा और मृत्यु को नहीं लाँघ सकते।

ऐश्वर्यं धनधान्यं च विद्यालाभस्तपस्तथा।
रसायनप्रयोगो वा न तरन्ति जरान्तकौ।।

ऐश्वर्य, धन–धान्य, विद्यालाभ, तप और रसायन प्रयोग–ये कोई भी जरा और मृत्यु के पार नहीं जा सकते।

मरणं हि शरीरस्य नियतं ध्रुवमेव च।
तिष्ठन्नपि क्षणं सर्वः कालस्यैति वंशपुनः।।

शरीर की मृत्यु निश्चित और अटल है। सब लोग यहाँ क्षण भर ठहरकर पुनः काल के अधीन हो जाते हैं।

न म्रियेरन् न जीर्येरन् यदि स्युः सर्वदेहिनः।
न चानिष्टं प्रवर्ते शोको वा प्राणिनां क्वचित्।।

यदि समस्त देहधारी प्राणी न मरे और न बूढ़े हो तो न उन्हें अनिष्ट की प्राप्ति हो और न शोक की ही।

अप्रमत्तः प्रमत्तेषु कालो भूतेषु तिष्ठति।
अप्रमत्तस्य कालस्य क्षयं प्राप्तो न मुच्यते।।
श्वः कार्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्ने चापराह्णिकम्।
कोऽपि तद् वेद यत्रासौ मृत्युना नाभिवीक्षितः।।

समस्त प्राणियों के असावधान रहने पर भी काल सदा सावधान रहता है। उस सावधान काल के आश्रय में आया हुआ कोई भी प्राणी बच नहीं सकता।

कल का कार्य आज ही कर डाले, जिसे अपराह्न में करना हो उसे पूर्वाह्न में ही पूरा कर डाले। कौन उस स्थान को जानता है, जहाँ उस पर मृत्यु की दृष्टि नहीं पड़ी होगी।

एवं चिन्तयतो नित्यं सर्वार्थानाम नित्यताम्।
उद्वेगो जायते शीघ्रं निर्वाणस्य परस्परम्।।
तेनोद्वेगेन चाप्यस्य विमर्शोजायते पुनः।
विमर्शोनाम वैराग्यं सर्वद्रव्येषु जायते।।
वैराग्येण परां शान्तिं लभन्ते मानवाः शुभे।
मोक्षस्योपनिषद् दिव्यं वैराग्यमिति निश्चितम्।।
एतत् ते कथितं देवि वैराग्योत्पादनं वचः।
एवं संचिन्त्य संचिन्त्य मुच्यन्तेहिमुमुक्षवः।।

इस प्रकार सदा सभी पदार्थों की अनित्यता का चिन्तन करते हुए पुरुष को शीघ्र ही एक–दूसरे से वैराग्य होता है, जो मोक्ष का कारण है। उस उद्वेग से उसके मन में पुनः विमर्श पैदा होता है। समस्त द्रव्यों की ओर से जो वैराग्य पैदा होता

है, उसी का नाम विमर्श है। शुभे! वैराग्य से मनुष्यों को बड़ी शान्ति मिलती है। वैराग्य मोक्ष का निकटतम एवं दिव्य साधुन है, यह निश्चित रूप से कहा गया है। देवी! यह तुमसे वैराग्य उत्पन्न करने वाला वचन कहा गया है। मुमुक्षु पुरुष इस प्रकार बारम्बर विचार करने से मुक्त हो जाते हैं।

यह ब्रह्मर्षियों और देवर्षियों द्वारा सम्मत योग सबीज और निर्बीज के भेद से दो प्रकार का है। उन दोनों में ही शास्त्रोक्त सदाचार समान है।

अणिमा, महिमा, गरिमा, लधिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व इन आठ भेदों वाले ऐश्वर्य पर अधिकार करके योग का अनुष्ठान किया जाता है। सम्पूर्ण देवताओं का सायुज्य पराश्रित योगधर्म है। ज्ञान सम्पूर्ण योग का मूल है, ऐसा समझो। साधक को व्रत, उपवास और नियमों द्वारा उस सम्पूर्ण ज्ञान की वृद्धि करनी चाहिये।

अविनाशी आत्मा में बुद्धि, मन और सम्पूर्ण इन्द्रियों की एकाग्रता हो, यही योगियों का ज्ञान है। ब्राह्मण, अग्नि और

देव मन्दिरों की पूजा करे तथा पूर्णतः सत्त्व गुण का आश्रय लेकर अमांगलिक भाव को त्याग दें।

दान, अध्ययन, श्रद्धा, व्रत, नियम, सत्य, आहार शुद्धि, शौच और इन्द्रिय–निग्रह–इनके द्वारा तेज की वृद्धि होती है और पाप धुल जाता है।

जिसका पाप धुल गया है, वह पहले तेजस्वी, निराहार, जितेन्द्रिय, अमोघ, निर्मल और मन का दमन करने में समर्थ हो जाये। तत्पश्चात् योग का अभ्यास करें।

एकान्त निर्जन प्रदेश में, जो सब ओर से घिरा हुआ और पवित्र हो, कोमल कुशों से एक आसन बनावे और उसे वहाँ भलीभाँति बिछा दें।

उस आसन पर बैठकर अपने शरीर और गर्दन को सीधी किये रहे। मन में किसी प्रकार की व्यग्रता न आने दें। सुखपूर्वक बैठकर अपने अंगों को हिलने–डुलने न दें। अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि रखकर सम्पूर्ण दिशाओं की ओर दृष्टिपात न करते हुए ध्यानमग्न हो जाये।

देवी! मन को दृढ़तापूर्वक स्थापित करना योग की सिद्धि का सूचक है; अतः सम्पूर्ण प्रयत्न करके मन को सदा स्थिर रखें। त्वचा, कान, जिह्वा, नासिका और नेत्र–इन सबको विषयों की ओर से समेटे। पाँचों इन्द्रियों को एकाग्र करके विद्वान् पुरुष उन्हें मन में स्थापित करें।

फिर सारे संकल्पों को हटाकर मन को आत्मा में स्थापित करें। जब मनसहित ये पाँचों इन्द्रियाँ आत्मा में स्थिर हो जाती है, तब प्राण और अपान वायु एक ही साथ वश में हो जाते हैं। प्राण के वश में हो जाने पर योग–सिद्धि अटल हो जाती है। सारे शरीर को निकट से उघाड़–उघाड़कर देखे और यह क्या है? इसका चिन्तन करें। शरीर के भीतर जो प्राणों की गति है, उस पर भी विचार करें।

इस प्रकार एकान्त प्रदेश में बैठकर मिताहारी मुनि अपने अन्तःकरण में पाँचों प्राणों का परस्पर योग करे और चुपचाप उच्छ्वास रहित हो बिना किसी थकावट के ध्यानमग्न रहे। योगी पुरुष बारम्बार उठकर भी चलते, सोते या ठहरते

हुए भी आलस्य छोड़कर योगाभ्यास में ही लगा रहे।

इस प्रकार जिसका चित्त ध्यान में लगा हुआ है, ऐसे योगाभ्यासपरायण योगी का मन शीघ्र ही प्रसन्न हो जाता है और मन के प्रसन्न होने पर परमात्म तत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है। उस समय अविनाशी पुरुष परमात्मा धूमरहित प्रकाशित अग्नि, अंशुमाली सूर्य और आकाश में चमकने वाली बिजली के समान दिखायी देता है।

उस अवस्था में मन के द्वारा ज्योतिर्मय परमेश्वर का दर्शन करके योगी अणिमा आदि आठ ऐश्वर्यों से युक्त हो देवताओं के लिए भी स्पृहणीय परमपद को प्राप्त कर लेता है। वरारोहे! विद्वानों ने दोषों से योगियों के मार्ग में विघ्न की प्राप्ति बतायी है। वे योग के निम्नांकित दस हो दोष बताते हैं।

काम, क्रोध, भय, स्वप्न, स्नेह, अधिक भोजन, वैचित्य (मानसिक–विकलता), व्याधि, आलस्य और लोभ–ये ही उन दोषों के नाम हैं। इनमें लोभ दसवाँ दोष है।

देवताओं द्वारा पैदा किये गये इन दस दोषों से योगियों

को विघ्न होता है; अतः पहले इन दस दोषों को हटाकर मन को परमात्मा में लगावे। योग के निम्नांकित आठ गुण बताये जाते हैं, जिनसे युक्त दिव्य ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

अणिमा, महिमा और गरिमा, लघिमा तथा प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व, जिसमें इच्छाओं की पूर्ति होती है। योगियों में श्रेष्ठ पुरुष किसी तरह इन आठ गुणों को पाकर सम्पूर्ण जगत् पर शासन करने में समर्थ हो देवताओं से भी बढ़ जाते हैं। जो अधिक खाने वाला अथवा सर्वथा न खाने वाला है, अधिक सोने वाला अथवा सर्वथा जागने वाला है, उसका योग सिद्ध नहीं होता।

(महाभारत अनुशासन पर्व दानधर्म पर्व अ. 145)

समाधि (आत्मलीनता) से आनन्दानुभूति एवं उसका फल

आत्मानुष्ठाननिष्ठस्य, व्यवहारबहिः स्थितेः।
जायते परमानन्द; कश्चिद्योगेन योगिनः।। (47) इष्टोपदेश

देहादि से निवृत्त होकर जो स्व–आत्मा में ही लीन होकर प्रवृत्ति–निवृत्ति रूप व्यवहार से दूर होकर ध्यान करता है ऐसे योगी को स्व–आत्मा ध्यान से एक अनिर्वचनीय परम आनन्द उत्पन्न होता है जो आनन्द अन्य में असम्भव है।

प्रत्येक आत्मा अनन्त अक्षय–ज्ञान घन या परमानन्द स्वरूप है परन्तु जिस प्रकार घने बादल के कारण सूर्य रश्मि प्रकट नहीं होती है उसी प्रकार घने कर्म के कारण राग–द्वेष–संकल्प–विकल्प के कारण वह स्वभाव लुप्त प्रायः है। तथापि जिस प्रकार बादल हटने पर, घटने पर सूर्य रश्मि प्रकट हो जाती है, उसी प्रकार साधना के बल पर कर्मादि क्षीण होने पर, विलीन होने पर स्व में निहित आनन्द प्रकट हो जाता है। यह आनन्द जीव का स्वाभाविक गुण या आनन्द है।

इस आनन्द को प्राप्त योगी के लिये संसार के समस्त सुख, वैभव तुच्छ प्रायः प्रतिभासित होते हैं, दुःख रूप दिखाई देते हैं। इसे ही सच्चिदानन्द, आत्मानन्द, परमानन्द, अनन्त सुख, अलौकिक आनन्द, इन्द्रियातीत आनन्द, ब्रह्मानन्द आदि नाम से अभिहित किया जाता है। इस आनन्द को प्राप्त करने के लिये समस्त धार्मिक विधियाँ की जाती हैं। बड़े–बड़े राजा, महाराजा, चक्रवर्ती आदि भी इस आनन्द को प्राप्त करने के लिये समस्त वैभव त्यागकर, सर्वसंन्यास लेकर ध्यान करते हैं। हर सम्प्रदाय के महापुरुष साधु–सन्त इस आनन्द को प्राप्त करने के लिए साधना तथा ध्यानरत रहते हैं।

हिन्दू धर्म के अनुसार महर्षि कपिल, पतंजलि यहाँ तक कि हिन्दू धर्म के सर्वश्रेष्ठ देव ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी इस आनन्द को प्राप्त करने के लिए समस्त, कार्यकलाप गतिविधियों को छोड़कर ध्यानलीन रहते हैं। जैन धर्म के अनुसार शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ जो स्वयं गृहस्थावस्था में चक्रवर्ती, कामदेव थे तथा जिनके दो कल्याणक हो गये ये

और तीन ज्ञान के भी धारी थे वे भी इस परम आनन्द को प्राप्त करने के लिये समस्त वैभव त्यागकर, साधु बनकर आत्म–ध्यान में लीन हो गए। गीता में महामानव नारायण श्रीकृष्ण ने अर्जुन के लिए ध्यान का वर्णन करते हुए निम्न प्रकार विवेचन किया है–

यत्रो परमते चित्तं निरुद्धं योग सेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्चन्मात्मानि तुष्यति।।
सुखमात्यंतिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यामतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चेवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः।।
यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचारल्यते।।
तं विद्याददुःख संयोग वियोगं योग संज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।।

योग के सेवन से अंकुश में आया हुआ मन जहाँ शान्ति पाता है, आत्मा से ही आत्मा को पहचानकर आत्मा में जहाँ

मन संतोष पाता है और इन्द्रियों से परे व बुद्धि से ग्रहण करने योग्य अनन्त सुख का जहाँ अनुभव होता है, जहाँ रहकर मनुष्य मूल वस्तु से चलायमान नहीं होता और जिसे पाने पर दूसरे किसी लाभ को वह उससे अधिक नहीं मानता और जिसमें स्थिर हुआ महादुःख से भी डगमगाता नहीं, उस दुःख के प्रसंग से रहित स्थिति का नाम योग की स्थिति समझना चाहिए। यह योग ऊबे बिना दृढ़तापूर्वक साधने योग्य है।

प्रशान्तमनस ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैतिशान्त रजसं ब्रह्मयूतमकल्मषम्।।

जिसका मन भली–भाँति शान्त हुआ है जिसके विकार शान्त हो गये हैं, ऐसा ब्रह्ममय हुआ निष्पाप योगी अवश्य उत्तम सुख प्राप्त करता है।

युञ्जनेव सदात्मानं योगी विगत कल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्प्रर्शमनन्तं सुखमश्नुते।।

आत्मा के साथ निरन्तर अनुसंधान करते हुए पाप

रहित हुआ वह योगी सरलता से ब्रह्म प्राप्ति रूप अनन्त सुख का अनुभव करता है।

आनन्दो निर्दहत्युद्धं कर्मेन्धनमनारतम्।

न चासौ खिद्यते योगी बहिर्दुःखेष्यचेतनः।। (48) इष्टो.

वह आत्मानन्द प्रवाह रूप से आने वाली प्रचुर कर्मसंतति को निर्दहन कर देता है जिस प्रकार कि अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है। ऐसा आनन्द से सम्पन्न योगी परीषह, उपसर्ग क्लेशादि बाह्य दुःख को अनुभव नहीं करता है। इसलिए वह उससे संक्लेश को प्राप्त नहीं होता है, खेद को प्राप्त नहीं होता है।

जब आत्मा स्व–आत्मा में ही स्थिर हो जाता है, रम जाता है, लीन हो जाता है तब स्वयं में अनन्त अक्षय आनन्द का अनुभव करता है। अरिहन्त, सिद्ध भगवान् पूर्णतः स्व–आत्मा में स्थिर होने के कारण वे सम्पूर्ण दुःखों से रहित अक्षय अनन्त आत्मोत्थ सुख का अनुभव करते हैं। सिद्ध भगवान् समस्त

द्रव्य कर्म, भावकर्म, नो कर्म अथवा घातिया–कर्म, अघातिया–कर्म नष्ट करके स्वयं में पूर्ण निस्पन्द रूप से लीन होने के कारण अनन्त सुख का अनुभव करते हैं तथा अरिहन्त भगवान् घातिया कर्म के नष्ट करने के कारण अनन्त सुख को अनुभव करते हैं। घातिया कर्म के अभाव से मोह, राग, द्वेष, तृष्णादि क्षय हो जाते हैं तथा अनन्त सुख, वीर्य, ज्ञान दर्शन प्राप्त कर लेते हैं जिसके कारण वे शरीर सम्बन्धी या पुण्य–पाप सम्बन्धी या समवशरण सम्बन्धी किसी भी प्रकार के सुख–दुःख वेदन नहीं करते हैं। जय–धवला में वीरसेन स्वामी ने केवली के शारीरिक सुख–दुःख वेदन नहीं करते हैं। जय–धवला में वीरसेन स्वामी ने केवली के शारीरिक सुख–दुःख, भूख, प्यास आदि नहीं होने का अत्यन्त सूक्ष्म दार्शनिक विवेचन निम्न प्रकार से किया है–

50. चार अघातिया कर्म विद्यमान हैं, इसलिए वर्तमान जिनके देवत्व का अभाव नहीं हो सकता है, क्योंकि चार अघातिया कर्म देवत्व के घात करने में असमर्थ हैं, इसलिए

उनके रहने पर भी देवत्व का विनाश नहीं हो सकता है।

शंका—चार अघातिया कर्म देवत्व के विरोधी नहीं है, यह कैसे जाना जाता है?

51. नामकर्म और गोत्रकर्म तो अवगुण के कारण है नहीं, क्योंकि जिन क्षीण मोह हैं। इसलिए उनमें नाम और गोत्र के निमित्त से राग और द्वेष सम्भव नहीं हो सकते हैं। आयुकर्म भी अवगुण का कारण नहीं है। क्योंकि क्षीण मोह जिन भगवान् में वर्तमान क्षेत्र के निमित्त से राग–द्वेष नहीं उत्पन्न होता है और आगे होने वाले लोक शिखर पर गमन के प्रति सिद्ध के समान उनके उत्कण्ठा नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि केवली जिन के विद्यमान आयुकर्म अवगुणों का कारण नहीं है। तथा वेदनीय कर्म भी अवगुणों का कारण नहीं है, क्योंकि यद्यपि केवली जिन के वेदनीय कर्म का उदय पाया जाता है, फिर भी वह असहाय होने से अवगुण उत्पन्न नहीं कर सकता है। चार घातिया कर्मों की सहायता से ही वेदनीय कर्म दुःख को उत्पन्न कर सकता है, परन्तु केवली जिन के

चार घातिया कर्म नहीं है, इसीलिए जल और मिट्टी के बिना बीज जिस प्रकार अपना कार्य करने में समर्थ नहीं होता है उसी प्रकार वेदनीय भी घाति चतुष्क के बिना अपना कार्य नहीं कर सकता है।

शंका—दुःख को उत्पन्न करने वाले वेदनीय कर्म के दुःख के उत्पन्न कराने में घातिचतुष्क सहायक है, यह कैसे जाना जाता है?

समाधान—यदि चार घातियाँ कर्मों की सहायता के बिना भी वेदनीय कर्म दुःख देने में समर्थ हो तो केवली जिन के रत्नत्रय की निर्बाध प्रवृत्ति नहीं बन सकती है। इससे प्रतीत होता है कि घाति चतुष्क की सहायता से ही वेदनीय अपना कार्य करने में समर्थ होता है।

घातिकर्म के नष्ट हो जाने पर भी वेदनीय कर्म दुःख उत्पन्न करता है यदि ऐसा माना जाये तो केवली जिन को भूख और प्यास की बाधा होनी चाहिए परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि भूख और प्यास में भोजन विषयक और जल विषयक तृष्णा के

होने पर केवली भगवान् को मोहपने की आपत्ति प्राप्त होती है।

इससे स्वतः सिद्ध हो जाता है कि आत्मा का स्वशुद्ध स्वरूप अनन्त आनन्द स्वरूप है। अतएव जो जीव जितने–जितने अंश में उस स्वरूप को प्राप्त करता जाता है वह उतने–उतने अंश में बाह्य दुःखों से निवृत्त हो जाता है और आत्मानन्द को अनुभव करता जाता है। इसलिए ध्यान में स्थित 8वें गुणस्थान से लेकर आगे के मुनियों को बाह्य दुःख का वेदन नहीं होता है। सामान्य व्यक्तियों को भी अनुभव में आता है कि यदि उनका मन किसी काम में लीन है तो अन्य विषय उन्हें अनुभव में नहीं आता है। अचेतन–अवस्था में भी शरीर के दुःख अनुभव में नहीं आते हैं। एन्थेसिया (अचेतन करने की औषधि) का प्रयोग करके शल्य–चिकित्सा की जाती है, उस समय हाथ, पैर, यहाँ तक कि हृदय को काटने पर भी उसकी पीड़ा अनुभव नहीं होती है।

समाधि से आनन्दानुभूति तथा मोक्ष

न जानन्ति शरीराणि सुखदुःखान्यबुद्धयः।
निग्रहानुग्रहधियं तथाप्यत्रैव कुर्वते।।(61)

भावार्थ–पौद्गलिक (भौतिक) शरीर ज्ञानरहित जड़ है वह शरीर न तो दुख समझता है, न उसे सुख का अनुभव होता है, फिर भी मिथ्यादृष्टि मूर्ख बहिरात्मा जीव कभी तो क्रोध, शोक आदि से भूखे प्यासे रह जाते हैं, शरीर को पत्थर अस्त्र–शस्त्र से कूट–पीट पर घायल कर लेते हैं इत्यादि अनेक तरह से शरीर का घात करके समझते हैं कि हमने शरीर को दण्ड दिया तथा शरीर को अच्छे स्वादिष्ट रसदार भोजन पान कराकर या सुन्दर वस्त्र आभूषण पहनाकर यो समझते हैं कि हमने शरीर पर बड़ा अनुग्रह किया–यानी–इसका भला किया है।

जीर्णे वस्त्रे यथात्मानं न जीर्णं मन्यते तथा।
जीर्णे स्वदेहेऽप्यात्मानं न जीर्णं मन्यते बुधः।।(64)

भावार्थ–शरीर पर पहना हुआ कपड़ा जब कुछ दिनों पीछे पुराना हो जाता है तो वह कपड़ा ही पुराना माना जाता है उस कपड़े के कारण शरीर को कोई पुराना नहीं समझता। इसी तरह यदि शरीर अधेड़ या बूढ़ा हो जाता है तो सम्यक्–दृष्टि उस शरीर के कारण अपने आत्मा को बूढ़ा हुआ नहीं समझता।

नष्टे वस्त्रे यथात्मानं न नष्टं मन्यते तथा।
नष्टे स्वदेहेऽप्यात्मानं न नष्टं मन्यते बुधः।।(65)

भावार्थ–अपने शरीर का कपड़ा पुराना होकर जब सड़–गल जाता है, फट जाता है, तो उस कपड़े को फैंक दिया जाता है, दूसरा कपड़ा पहन लिया जाता है। कोई भी मनुष्य कपड़े के फट जाने पर अपने शरीर को सड़ा–गला फटा या त्याज्य नहीं समझता, इसी तरह अपने आत्मा का ठीक अनुभव करने वाला सम्यक्ज्ञानी पुरुष शरीर को नष्ट होता हुआ देखकर अपने अविनाशी आत्मा को नष्ट हुआ अनुभव नहीं करता, अपना पुराना शरीर बदलकर वह नया शरीर पा लेता है।

मुक्तिरेकान्तिकी तस्य चित्ते यस्यावला धृतिः।
तस्य नैकान्तिकी मुक्तिर्यस्य नास्त्यचला धृतिः।।(71)

भावार्थ–संसार से मुक्त वही व्यक्ति हुआ करता है जिसके हृदय शरीर और आत्मा को भेद–विज्ञान होता है। जिसको शरीर और आत्मा को अलग समझने का श्रद्धान नहीं है, वह संसार से कभी मुक्त नहीं हो सकता, ऐसा मिथ्यादृष्टि सदा संसार में भ्रमण करता रहेगा।

शरीर का विनाश निश्चित

उपायकोटिदूरक्षे स्वतस्तत इतोऽन्यतः,
सर्वतः पतनप्राये कायेे कोऽयं तवाग्रहः।।69।।
अवश्यं नश्वरैरेभिरायुः कायादिभिर्यदि।
शाश्वतं पदमायाति मुधाऽऽयातमवेहि ते।।70।।

हे प्राणी! करोड़ों उपायों से स्वयं के द्वारा या अन्य के द्वारा जिसकी रक्षा नहीं की जा सकती, तुझे ऐसे शरीर की रक्षा करने का आग्रह क्यों है? जिस प्रकार डाभ की अनी पर

पड़ी ओस की बूँद का पतन अवश्य होगा, उसी प्रकार इस शरीर का पातन भी अवश्य होगा। यह आयु और शरीर दोनों विनाशीक हैं। इनका ममत्व छोड़कर अविनाशी पद प्राप्त करने का अवसर तुझे सहज प्राप्त हुआ है।

महामुनियों का कुछ भी बिगाड़ने में कर्म असमर्थ

निर्धनत्वं धनं येषां मृत्युरेव हि जीवितम्।
किं करोति विधिस्तेषां सतां ज्ञानैकचक्षुषाम्।।62।।

निर्धनता ही जिनका धन है और मरण ही जिनका जीवन है और जो ज्ञान ही जिनका नेत्र है—ऐसे सन्त पुरुषों का विधाता अर्थात् कर्म क्या कर सकते हैं? अर्थात् कुछ नहीं कर सकते।

आशा को निराश करने वालों का कर्म कुछ नहीं बिगाड़ सकते

जीविताशा धनाशा च येषां तेषां विधिर्विधिः।
किं करोति विधिस्तेषां येषामाशा निराशता।।63।।

जिन्हें जीने की और धन पाने की आशा है, विधाता (कर्म) उनका ही विधाता है; परन्तु जिनकी आशा नष्ट हो गई है विधाता उनका क्या कर सकते हैं? अर्थात् कुछ भी नहीं कर सकते।

कषाय–शत्रु को जीतना आसान

करोतु न चिरं घोरं तपः क्लेशासहो भवान्।
चित्तसाध्यान् कषायारीन् न जयेद्यत्तदज्ञता।।212।।

यदि तू काय–क्लेश सहन करने में असमर्थ होने से चिरकाल तक घोर तप नहीं कर सकता तो मन के द्वारा ही जीते जाते हैं—ऐसे क्रोध–मान–माया–लोभ आदि शत्रुओं को तो जीत। यदि इन्हें भी नहीं जीतता तो यह बड़ी अज्ञानता है, क्योंकि कषाय जीतने में तो कोई काय–क्लेश नहीं है, इसमें तो मन ही सुलटना है।

निकट भव्य जीवों को होने वाले भाव

विषयविरतिः संगत्यागः कषायविनिग्रहः,
रामयमदमास्तत्त्वाभ्यासस्तपश्चरणोद्यमः।

नियमितमनोवृत्तिर्भक्तिर्जिनेषु दयालुता,

भवति कृतिनः संसाराब्धेस्तटे निकटे सति।।224।।

विवेकी जीवों को संसार–समुद्र का किनारा निकट आने पर विषयों से विरक्तता, परिग्रह का त्याग, कषायों का निग्रह, शम (शान्ति अर्थात् रागादि का त्याग) दम (मन और इन्द्रियों का निराध) और यम (जीवन पर्यन्त हिंसादि पापों का त्याग) इनका धारण, तत्त्व का अभ्यास, तपश्चरण का उद्यम, मन की वृत्तियों का निरोध, जिनेन्द्र भक्ति और जीवों की दया इत्यादि सामग्री प्राप्त होती है।

गुणों से मण्डित मुनिराज ही मुक्ति के पात्र

समाधिगतसमस्ताः सर्वसावद्यदूराः,

स्वहितनिहितचित्ताः शान्तसर्वप्रचाराः।

स्वपरसफलजल्पाः सर्वसंकल्पमुक्ताः,

कथमिह न विमुक्तेर्भाजनं ते विमुक्ताः।।226।।

जो समस्त त्यागने योग्य और ग्रहण करने योग्य वस्तुओं का स्वरूप भलीभाँति जानते हैं, हिंसादि सभी पापों

से दूर हैं, जिनका चित्त आत्म–कल्याण के कारणभूत सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चरित्र में स्थित है, सर्व इन्द्रियों के विषयों से निवृत्त हो गए हैं, जिनके वचन स्व और पर का कल्याण करने वाले हैं और जो समस्त संकल्प–विकल्पों से रहित हैं–वे महापुरुष सर्व प्रपंचों से रहित होते हुए मुक्ति के भाजन (पात्र) क्यों न होंगे? अर्थात् वे निःसंदेह शिव–सुख के पात्र होंगे।

आगमोक्त समाधि के अनन्तर शव विसर्जन क्रिया !

समाधि के अनन्तर-देहविसर्जन (देहदान) की भावना क्यों है

आचार्यश्री कनकनंदी मेंं!

इस संसार में जिस भी प्राणी का जन्म हुआ है, उसका मरण भी अवश्य ही होगा अर्थात् कोई भी प्राणी ऐसा नहीं, जिसका मरण न होता। यह एक प्रकृति की, जीवन की अवश्यंभावी अन्तिम परिणति है। मरण के समय किसी भी प्राणी के दो भाग हो जाते हैं–

प्रथमतः जीवात्मा व द्वितीयः देह। जीवात्मा तो अपने कर्मानुसार नया भव धारण कर लेता है अर्थात् वह केवली अवस्था में है तो समस्त कर्मों का क्षपण होने से वह मुक्त होकर लोकाग्र में अनन्तकाल के लिये अनन्त सुख अवस्था में विराजमान हो जाता है। किन्तु यहाँ प्रश्न है–आत्मा के शरीर को त्यागने के पश्चात् शरीर या देह का क्या किया जाये?

प्राचीन काल से ही मुख्यतः इस शेष देह की समाप्ति

के लिये चार प्रक्रियाएँ चली आ रही है।

(1) देह को पृथ्वी में ही गढ्डा बनाकर गहराई में दबा दिया जाता है अर्थात् पृथ्वी को समर्पण कर देते हैं।

(2) देह का लकड़ी व अन्य ज्वलनशील पदार्थों की सहायता से दाह कर दिया जाता है।

(3) देह को प्रायः जल में विसर्जित कर दिया जाता है। तथा

(4) शेष देह को वन में अथवा किसी अन्य निर्जन स्थान पर छोड़ दिया जाता है, जहाँ पशु–पक्षी उसे समाप्त कर देते हैं।

भारतवर्ष में प्रायः जैन व हिन्दू संस्कृति के व्यक्ति अन्तिम शरीर की समाप्ति के लिये 'दाह संस्कार' करते हैं।

जो मनुष्य संसार के भोगों से विरक्त होकर दिगम्बर मुनि, साधु व अन्य प्रकार से साधक का जीवन व्यतीत करते हैं, उनकी मृत्यु के पश्चात् प्रायः उनकी देह का भी चन्दन, सूखे गोले (नारियल) व अन्य प्रासुक ज्वलनशील पदार्थों से दाह ही किया जाता है। किन्तु यहाँ प्रश्न उठता है कि जो साधु, समस्त जीवन में छह प्रकार के जीवों की विराधना का

सम्पूर्ण त्याग कर चुके हैं, क्या मरणोपरान्त उनकी देह द्वारा संख्यात, असंख्यात व अनन्त जीवों का हनन हो? इसकी उपयुक्त व धार्मिक क्रिया के लिये हमारे प्राचीन आचार्यों ने भगवती आराधना आदि आचार ग्रन्थों में सुस्पष्ट, सटीक व विस्तार से वर्णन किया है। देह में वैसे भी निगोदिया जीव, सम्मूर्च्छन व अन्य त्रस जीव पाये जाते हैं, जिनकी संख्या अनन्तानन्त है। मरणोपरान्त मृत शरीर में धीरे-धीरे अन्य जीवों की उत्पत्ति होने लगती है, तथा जैसे-जैसे विलम्ब होता है यथा-दर्शनार्थ शव का रखना, परिवारजनों की प्रतीक्षा करना आदि, उसमें और भी अधिक सूक्ष्म व त्रस जीवों की उत्पत्ति अन्तर्मुहूर्त में हो जाती है। अब तनिक ध्यान दीजिये क्या अग्नि दाह में उन सभी जीवों की हिंसा का दोष नहीं लगेगा?

इस प्रकार मृत देह के कारण, आगम विरुद्ध हिंसा, प्रदूषण, श्रावकों का विसर्जन हेतु अवलम्बन, अन्तिम संस्कार के लिये भी बोली आदि लगाना, उनकी समाधि स्थल निर्माण के लिये जमीन आदि का विवाद व उसी सम्बन्धी अन्य बहुत-सी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। आचार्यों ने इस कारण विशेषतः साधुओं के समाधि उपरान्त देह के विसर्जन

का विस्तृत रूप से मूलाराधना आदि में निम्न प्रकार से उल्लेख किया है।

भगवती आराधना की कुछ गाथाओं का अवलोकन करें-

एवं कालगदस्स दु सरीरमतोबहिज्ज वाहिं वा।
विज्जावच्चकरा तं सयं विकिंचंति जदणाए।।

(1966) भ.आ.

जो क्षपक लोकान्तर को प्राप्त हुआ है अर्थात् मर गया है, तब वैयावृत्ति करने वाले मुनि, उसका शरीर जो कि नगर या वसतिका में पड़ा रहता है, उसके शव को स्वयं बड़े प्रयत्न से स्वयमेव ले जाते हैं।

ध्यान दीजियेगा कि शव को भी स्वयं मुनियों द्वारा ही ले जाने का निर्देश दिया गया है।

एगंता सालोगा णादिविकिट्ठा ण चावि आसण्णा।
वित्थिण्णा विद्धता णिसीहिया दूरभागादा।।

(1968) भ.आरा.

निषिधिका (अन्तिम संस्कार स्थल) एकान्त प्रदेश में, अन्य जनों को दिखाई न दे, ऐसे प्रदेश में हो, प्रकाश सहित

हो, व नगरादि से अति दूर न हो, अति समीप न हो, वह टूटी हुई विध्वंस की गयी, ऐसी भूमि न हो, वह विस्तीर्ण, प्रासुक और दृढ़ होनी चाहिये। शव को वहाँ छोड़ दिया जाता है।

इस प्रकार गाथा 2000 तक इनकी की जाने वाली क्रिया का स्पष्ट उल्लेख है। अन्त में कहते हैं कि–

जं वा जिसमुवणीदं सरीरयं खगचदुप्पदगणेहिं।
खेमं सिवं सुभिक्खं विहरिज्जजोवं दिस संघो।।(1998) भ.आ.

पक्षी या चतुष्पद प्राणी जिस दिशा में उस क्षपक का शरीर ले गये होंगे, उस दिशा में संघ विहार करे, उस दिशा की ओर क्षेमादि समझना चाहिए।

इस प्रकार से दो–तीन दिन में होने वाली क्रिया से भविष्यगत शकुन आदि का भी विचार किया जाता है।

इन सबका विस्तृत वर्णन आप स्वयं मूलाराधना (भगवती आराधना), मरण–कण्डिका, आचार्यश्री कनकनंदी द्वारा रचित ज्वलन्त शंकाओं का शीतल समाधान, अमृत तत्त्व की उपलब्धि हेतु समाधिमरण आदि का भी अध्ययन करके भलीभाँति ज्ञान व निर्णय कर सकते हैं।

इन सब उल्लेखों का भलीभाँति पठन, मनन, चिन्तन करने के पश्चात् परम–पूज्य वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी महाराज ने अपने लिये यह भावना भायी है कि–

समाधि के पश्चात् इस जड़ शरीर को दूसरों के उपकार के लिये, साधु वर्ग से लेकर भक्तगण व जैन समाज के द्वारा, उस शरीर का सदुपयोग, रोगी, विकलांग आदि जरूरतमंदों के लिये किया जाये। आचार्यश्री की यह भावना विगत 10–15 वर्षों से है तथा संघस्थ साधुओं को पहिले ही अपनी भावना से अवगत करा चुके हैं। उनका यह निर्णय स्वयं के लिये, स्वयं के द्वारा है, अन्य किसी के लिये बाध्यता नहीं। वर्षायोग (2009) से पूर्व ओबरी ग्राम प्रवास में महावीर जयन्ती के पुनीत अवसर पर वहाँ जैन धर्मावलम्बियों ने अपने देहदान, नेत्रदान आदि के लिये निर्णय भी लिया जहाँ आचार्यश्री ने अपनी भावना फिर दोहरायी।

प्रस्तुति–प्रो. प्रभात कुमार जैन

ग्रामीण अंचल में 11वीं वैज्ञानिक संगोष्ठी अप्रत्याशित सफलतापूर्वक सानन्द सम्पन्न

(ग्रन्थ सृजन, अनुवाद, विमोचन, शपथ ग्रहण के साथ)

धर्म ग्राम रामगढ़ में ज्ञान–विज्ञान का नवप्रभात हुआ जब देश के विविध अंचलों से वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स, निर्देशक, कवि, उपकुलपति, आगम मनीषियों जैसे श्रीमान् व धीमान् व्यक्तित्व परम पूज्य विज्ञान दृष्टि सम्पन्न युगाचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव (ससंघ) के पावन चरणों में नतमस्तक होते हुए द्वि–दिवसीय अनोखी 11वीं वैज्ञानिक संगोष्ठी के माध्यम से ग्रामीणजनों के मध्य ज्ञान गंगा प्रवाहमान हुई, जिससे आगन्तुक विद्वत्जन, ग्रामीणजन, विद्यार्थी, शिक्षक, सन्तजन, सज्जनवृन्द भक्तगणों ने अपूर्व ज्ञानामृत का पान किया एवं रूढ़िवाद से हटकर एक नवीन क्रान्ति, शान्ति एवं रचनात्मक उपलब्धि का अनुभव किया।

धरणगाँव (महाराष्ट्र) से पधारे मोहनलालजी गाँधी ने स्वागत गीत के माध्यम से अतिथियों का स्वागत किया एवं वे इतने अभिभूत हुए कि उन्होंने कहा कि मैंने अपनी 72 वर्ष की आयु में जितना ज्ञान व बोध प्राप्त नहीं किया वह मैंने इन दो दिनों में प्राप्त किया है, मैं इस उपलब्धि के सन्देश को भारत की महामहिम राष्ट्रपति प्रतिभाताई पाटिल तक पहुँचाऊँगा जो कि हमारे जलगाँव जिले की हैं। आचार्य की कृतियों का मराठी में अनुवाद करते रहने की अपनी शुभ भावना व्यक्त की।

संगोष्ठी में पधारे सभी शोधार्थी विद्वानों ने एक से बढ़कर एक विविध विषयों पर शोधपत्र प्रस्तुत किये। विज्ञान केन्द्र निर्देशक जीतूभाई शाह ने Jainism and Science Forum के माध्यम से ग्राम में विश्व विज्ञान सम्मेलन की आवश्यकता बताई। उदयपुर से डॉ. के.एल. कोठारी ने विज्ञान समिति की चर्चा की। उपकुलपति डॉ. तातेड़जी ने जैन साधुओं को पूर्ण अहिंसक सिद्ध किया। डॉ. पारसमलजी अग्रवाल ने सच्ची समझ से आरोग्य शान्ति समता की उपलब्धि

की चर्चा की। भूगोल व्याख्याता कनकमलजी हाड़ोतिया ने सप्त तत्वों की व्याख्या की। प्रो. प्रभातजी ने जैन जीव विज्ञान पर अपनी रोचक व्याख्या दी। प्रो. सुशीलजी ने अल्ट्रा मॉडर्न नालेज के माध्यम से सुन्दर प्रस्तुति दी। डॉ. कछाराजी ने इस छोटे से ग्राम की सत्कार व्यवस्था को अपूर्व अनुभव बताया। अन्त में इस ग्राम के माध्यम से आचार्यश्री ने अपने उद्बोधन से सुप्त शक्तियों को जागृत करने का आह्वान किया एवं रामगढ़ की मूर्ति छोटी होते हुए कीर्ति महान् है। ऐसा शुभाशीष प्रदान किया।

शुभाकांक्षा सह!

मुनि सुविज्ञसागर, संघस्थ आचार्यश्री कनकनंदीजी गुरुदेव

जैनधर्म की प्रभावना

(ग्रामीण अंचल रामगढ़, जिला–डूँगरपुर (राज.) से लेकर विश्व स्तर पर आस्ट्रेलिया की नगरी मेलबोर्न तक)

जैन धर्म का विश्व स्तर पर प्रचार–प्रसार करने हेतु ध र्म–दर्शन–विज्ञान शोध संस्थान बड़ौत एवं धर्म–दर्शन सेवा संस्थान, उदयपुर के तत्वावधान में तथा वैज्ञानिक धर्माचार्य प. पू. श्री कनकनंदीजी (ससंघ) के सानिध्य में दिनांक 12 व 13 सितम्बर, 2009 को एक संगोष्ठी "आधुनिक ज्ञान–विज्ञान से परे जैन विज्ञान" तथा "जैन दर्शन में शान्ति व सफलता के सूत्र" पर आयोजित की गई जिसमें श्री पारसमल जी अग्रवाल वैज्ञानिक (अमेरिका), डॉ. के.एल. कोठारी (अध्यक्ष–विज्ञान समिति), उपकुलपति डॉ. सोहनराज जी तातेड़ (जोधपुर), प्रो. प्रभात कुमार (गाजियाबाद), प्रो. सुशीलचन्द्र (बड़ौत), डॉ. नारायणलाल कछारा (उदयपुर), श्री मोहनलाल गाँधी (जलगाँव–महाराष्ट्र) आदि अनेक देश–विदेश के विद्वान् वैज्ञानिकों के माध्यम से बागड़ क्षेत्रवासियों का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में मार्गदर्शन किया।

इसी सन्दर्भ में डॉ. नारायणलाल कछारा जी प.पू. आचार्य श्री कनकनंदीजी के निर्देशन पर दिनांक 3 दिसम्बर से 9 दिसम्बर, 2009 तक आस्ट्रेलिया के मेलबोर्न शहर में होने वाले विश्व धर्म–सम्मेलन में जैन कर्म सिद्धान्त को प्रस्तुत करने जा रहे हैं, जिसमें सारे विश्व से सभी धर्मों के लगभग दस हजार प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं, उनमें से चुने 300 व्यक्तियों में से एक डॉ. कछाराजी हैं जो जैन कर्म सिद्धान्त की वैज्ञानिकता को प्रस्तुत करेंगे।

प्रस्तुति–प्रो. सुशीलचन्द्र जैन बड़ौत

आचार्यश्री कनकनंदीजी के प्रतिनिधित्व रूप में डॉ. कछारा का विश्व धर्म-सम्मेलन में प्रतिनिधित्व

Program Successfully submitted

Thursday, February 12, 2009 9:33 AM

From:

"Parliament of the Worlds Religions" <noreply@parliamentofreligions.org>

Add sender to Contacts

To:

"Narayan Kachhara"<nlkachhara@yahoo.com>

Thank you for submitting your program proposal to www.parliamentofreligions.org. Final decisions regarding program acceptance will be made by June 2009.

The details of your program proposal are included below.

If you have further questions please contact us at program@parliamentofreligions.org.

Thank you!

Program Information

Program Title : Jain Doctrine of Karma: Spiritual and Scientific Dimensions

Description : The Doctrine of Karma propounded by Lord Mahavira is the law of nature that guides the life of all organisms. Briefly, the law states "You reap what you sow." The law operates through the body structure of organisms. All organisms in their worldly existence have, besides a soul, three bodies, a karma body, a luminous body and a material body. The first two bodies are subtle (invisible) and accompany the soul birth after birth. Modern science has identified the karma body as a coherent electromagnetic field that controls the physiological activities of the body. Scientists have also confirmed the existence of luminous body. The karma body constitutes a system whereby a soul maintains records of his actions, that becomes guiding factor in future life. The present is guided by the past and shapes the future. The whole philosophy of life is built around this doctrine according to which bodily attractions and hatred lead to dissatisfaction and misery, purity of mind leads to love

and peace and contact with the soul leads to bliss. By good actions and thoughts one can break through karma, earn heavenly pleasure and make a better world.

Format : Other (Lecture/Seminar)

How Your Program Relates to the 2009 Parliament Theme : One of the reason of inhuman behavior, hatred, conflict and violence is ignorance of Doctrine of Karma. The Doctrine teaches an individual to restrain from malevolent acts, rise above bodily pleasures, choose society over self, love over hatred, respect all lives, practice non-violence and limit his greed and possessions. For instance, it tells terrorist that his action will lead him to hell and not to heaven. A believer of the Doctrine of Karma makes a world of Difference.

How Your Program Relates to the Goals of the Parliament : The program is directly related to the goals of the Parliament; it promotes better living, commitment to better world, humane behavior, better social and environmental conditions, personal peace and motivation to spiritual way of life.

How Your Program Helps to Achieve the Goals :

The Doctrine is not merely a philosophical statement but a fact supported by scientific evidence. It is true for all individuals, irrespective of their faith. The knowledge of this Doctrine inspires an individual to improve his conduct and behavior that leads to fulfillment of the goals. The lecture shall be supplemented by power point presentation and take-home fliers.

Your Predicted Audience : The Jain community would be interested to know the scientific support to the Doctrine of Karma. People from other faiths would be curious to know how the law operates and what is its status in relation to the modern science. Jain philosophy is the only philosophy that gives details of the mechanism of the law. It would be a novel experience to many.

SPEAKERS

Main Speaker

Name	:	Narayan Kachhara
Religious Tradition	:	Jain
Religious Sub Tradition	:	
Availability	:	

Biographical Statement : Born in Udaipur district Dr. Narayan Lal Kachhara passed B.E. (Mechanical) in 1961, M.E. (Mech) in 1969, and Ph.D. in 1973 from Univesity of Salford, UK. He taught at University of Jodhpur, Malviya Regional Engineering College, Jaipur, University of Salford UK, Harcourt Butler Technological Institute, Kanpur, University of Aden, Yemen. He was Director of Kamala Nehru Institute of Technology, Sultanpur and Principal of Motilal Nehru Regional Engineering College, Allahabad. He also served as expert and advisor to various institutions, Universities, Organizations and Boards in India and abroad.

Since retirement in 1997 he has been working for religious and social cause. Scientific spiritualism is his fond subject. He is particularly exploring the scientific nature of Jain philosophy on which he has authored half a dozen books. He is currently engaged in interpreting Jaina beliefs and theories, particularly Doctrine of Karma and duality, in scientific perspective.

He has lectured on Jain philosophy in many National and International conferences and forums.

Honours:

1. Jain Agama Manishi (Scholar of Jain Scripture) Award 2008, by Jain Vishva Bharati, Ladnun, and M.G. Saraogi Foundation, Kolkata.
2. Arhat Vacan Purushkar for second best paper 2008, by Kundakunda Jnanpitha, Indore.

Other Speaker 1

Name	:	Acharya Kanaknandhi
Religious Tradition	:	Jain
Religious Subtradition	:	
Availability		

Biographical Statement : Acharya Kanaknandhi (first author) is a Jain monk and a great scholar, he has authored about 180 books on Jainism. He shall not attend the Parliament due to restrictions imposed by his ascetic way of life. His contact is care of Prof. Narayan Kachhara.

आचार्य श्री कनकनंदी के प्रतिनिधित्व रूप में डॉ. कछारा का विश्व धर्म सभा में प्रतिनिधित्व

विश्व धर्म सभा

3–9, दिसम्बर, 2009 मेलबोर्न, आस्ट्रेलिया

(आह्वान–एक भिन्न विश्व का निर्माण, संवाद स्थापित हो, पृथ्वी की पीड़ा हरो)

आज हम एक ऐसे विश्व में रह रहे हैं जिसमें अपूर्व अवसर एवं चुनौतियाँ हैं, भयंकर खतरा और महान् क्षमताएँ हैं। एक मानव समाज के रूप में बचे रहने और संपन्न बनने के लिए हमें आपस में एक साथ रहना और कार्य करना सीखना होगा, पूर्व और पश्चिम, विकासशील उत्तर और विकासशील दक्षिण, स्त्री और पुरुष, युवा और प्रौढ़, धार्मिक और अधार्मिक परम्परावादी और आधुनिक सबको साथ–साथ रहना होगा। हमारे वैयक्तिक, सामाजिक और वैश्विक निर्णय हमारे भविष्य का निर्माण करते हैं। विश्व धर्म सभा विश्व के विभिन्न धर्मों और अध्यात्मिक समूहों को एक मंच पर लाने और उनमें समन्वय स्थापित करने, गरीबी दूर करने, सामाजिक

समरसता को प्रोत्साहन देने और विश्व में शांति स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील है। विश्व में विविधता हमारी आशाओं का एक नया स्त्रोत बन सकती है।

इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें एक–दूसरे को सुनना होगा। अर्थपूर्ण संवाद आपसी सम्मान को मजबूत करता है। हमारा भविष्य वातावरण पर निर्भर करता है, जो बहुत दूषित हो गया है। पृथ्वी की इस पीड़ा का हरने और प्राकृतिक क्षमतानुसार विकास के लिए हमें अपने विचारों को बदलना होगा। पृथ्वी सब प्राणियों के लिए है और इसके अनुरूप हमें एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाना होगा। परस्पर संवाद स्थापित करके, और पृथ्वी की पीड़ा को हरते हुए हम एक सुखद और शांतिपूर्ण विश्व तथा उज्ज्वल भविष्य की कल्पना कर सकते हैं। वर्ष 2009 की विश्व धर्म सभा इन्हीं विषयों को संबोधित करती है।

विश्व धर्म सभा का एक गौरवशाली इतिहास है। पहली सभा 1893 में शिकागो में आयोजित हुई थी जिसके मुख्य आकर्षण स्वामी विवेकानंद थे। फिर दूसरी सभा एक सौ वर्ष बाद 1993 में शिकागो में ही सम्पन्न हुई। तीसरी सभा 1999 में केपटाउन, दक्षिण अफ्रीका और चौथी सभा बार्सिलोना, स्पेन में आयोजित हुई। पाँचवी सभा दिसम्बर, 2009 में मेलबोर्न, आस्ट्रेलिया

में सम्पन्न होने जा रही है। यह सभा एक ऐतिहासिक घटना होगी, इसमें पहली बार व्याख्यान, शैक्षिक पत्रवाचन, संगोष्ठी, कार्यशाला, समूह चर्चा, धार्मिक और आध्यात्मिक पूजा–अर्चना, शैक्षिक सत्र, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि का समावेश किया गया है। सात दिन के विशाल कार्यक्रम में विश्व के कोने–कोने से आये सभी धर्मों के गुरु तथा प्रतिनिधि, राजनेता, विद्वान, कार्यकर्ता और प्रतिभागी अपना योगदान देंगे। आशा की जा रही है कि आस्ट्रेलिया और विश्व के लगभग 8000 व्यक्ति इस सभा में भाग लेंगे। प्रतिदिन प्रातः 8.00 से 9.00 बजे तक धार्मिक पूजा–अर्चना, 9. 00 से 11.00 बजे तक विभिन्न धर्मों के तथा 11.30 से 13.00 बजे तक अंतर्धर्मीय कार्यक्रम होंगे। अपराह्न 2.30 से 4.00 तक विशेष धार्मिक सहकारी कार्यक्रम और 4.00 से 6.00 बजे तक खुले सत्र आयोजित किए जायेंगे। रात्रि में 7.30 से 9.00 बजे तक कलात्मक कार्यक्रम होंगे।

मेलबोर्न आस्ट्रेलिया के विक्टोरिया प्रांत की राजधानी है तथा धार्मिक, सांस्कृतिक विविधता का केन्द्र है। यहाँ 180 से अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं और 100 से अधिक धर्मों के अनुयायी निवास करते हैं। मेलबोर्न आस्ट्रेलिया का आयोजनों का शहर है। सभा के साथ–साथ एक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया है।

भारत से श्री श्री रविशंकर, डॉ. करण सिंह, महामहिम दलाई लामा, जथेदार सिंह साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंह, डॉ. होमी बी ढल्ला और अन्ना पिंटो प्रमुख वक्ताओं में होंगे। जैन समाज से श्री अमरेन्द्र मुनिजी, श्री लोकेश मुनिजी, समणी विनय प्रज्ञा, प्रो. दीपक जैन (अमेरिका), प्रो. नारायण लाल कछारा, श्री सुगन जैन, श्री सोहनलाल गाँधी, डॉ. कोकिला शाह, श्री किरीट दफ्तरी (अमेरिका), रक्षा शाह (अमेरिका), प्रियदर्शना राखेचा, श्री विनोद कपाशी (इंग्लैण्ड) तथा श्री संचय जैन अपने वक्तव्य प्रस्तुत करेंगे।

जैन व भारतीय बंधुओं को इस सभा में भाग लेकर विश्व धर्म सभा के इस महान कार्य में सहयोग प्रदान करना चाहिए।

–डॉ. नारायण लाल कछारा

अधिक जानकारी के लिए देखें–

www.parliamentofreligions.org

या सम्पर्क करें–डॉ. नारायण लाल कछारा,

फोन : 0294–2491422, मो. 09214460622

आचार्यश्री कनकनंदीजी द्वारा दायर बूचड़खाना विरोधी लोकहित याचिका की स्वीकृति राष्ट्रपति भवन से

President's Secretariat

Public-1 Section

No. : P1/C-83238 — Rashtrapati Bhavan

Dated : 27-Aua-2004 — New Delhi-110004

Dear Sir/Madam,

I am to acknowledge receipt of your communication dated 19-Aua-2004 which has been forwarded to Secretary to the Govt. of India. Ministry of Home Affairs ....)

New Delhi for appropriate action.

Yours faithfully

(A. Samuel)

Under Secretary(P)

P1/C-83238 — On India Government Service

To

Shri Acharya Kanaknandi
Dr. Narayanlal Kachhara
55, Ravinder Nagar,
Udaipur-313003 Rajasthan

From :
President's Secretariat.
Rashtrapati Bhavan
New Delhi - 110004

आचार्यश्री कनकनंदीजी गुरूदेव ससंघ के विशेष कार्यक्रम

(देश–विदेश विश्वविद्यालय तक)

1. www.jainworld.com. अमेरिका से 147 देशों में आचार्यश्री कनकनंदीजी गुरुदेव के साहित्य उपलब्ध हैं।
2. www.jainkanaknandhi.org.
3. E-mail-info@jainkanaknandhi.org.
4. E-mail-shrikanaknandhiji@yahoo.com.
5. राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ–11
6. धर्म दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन–32
7. धार्मिक प्रशिक्षण कक्षाएँ–सैकड़ों
8. स्वसंघ–परसंघ के साधुओं के अध्ययन–अध्यापन के कार्यक्रम–सैकड़ों
9. प्रश्नमंच एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम, भजन, भाषण, सेवा–सैकड़ों

10. बच्चों, युवक–युवतियों को संस्कारवान बनाना एवं उनसे आहार लेना–हजारों
11. हर क्षेत्र में अच्छे व्यक्ति को एवं संस्थाओं को पुरस्कृत करना–हजारों
12. हर विधा के वैज्ञानिक शोधपूर्ण साहित्यों का सृजन एवं प्रकाशन–185 ग्रंथ (छः भाषाओं में अनेक संस्करण)
13. कम्प्यूटराइज्ड प्रतियोगिता–11
14. अनेक विश्वविद्यालयों में "आचार्यश्री कनकनंदी साहित्य कक्ष" की स्थापना यथा–
    - (i) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय–उदयपुर
    - (ii) जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय–लाडनूँ
    - (iii) जयपुर विश्वविद्यालय–जयपुर
    - (iv) हिन्दू विश्वविद्यालय–बनारस
    - (v) सिंघानिया विश्वविद्यालय–झुँझुनूँ
    - (vi) लखनऊ विश्वविद्यालय–लखनऊ
    - (vii) कानपुर विश्वविद्यालय–कानपुर

(viii) जबलपुर विश्वविद्यालय–जबलपुर
(ix) जैन दर्शन अनुसंधान केन्द्र–अहमदाबाद
(x) जोधपुर विश्वविद्यालय–जोधपुर
(xi) तीर्थंकर वर्द्धमान वि.वि.–मुरादाबाद (यू.पी.)

और भी 100 विश्वविद्यालयों में स्थापना चालू।

15. गरीब, असहाय, रोगी, विपन्न मनुष्य एवं पशु–पक्षियों की सेवा–सहायता करना।
16. व्यक्ति से लेकर राष्ट्र एवं विश्व में समता–सुख–शांति–मित्रता, संगठन आदि की स्थापना के लिए प्रयास।
17. धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान (बड़ौत, मुजफ्फरनगर, कोटा, उदयपुर, मुंबई, सलूम्बर, प्रतापगढ़, अमेरिका, सागवाड़ा, गाजियाबाद)।
18. धर्म दर्शन सेवा संस्थान (उदयपुर, अमेरिका)।
19. जैन, हिन्दू, मुसलमान शोध छात्रों, प्रोफेसरों द्वारा आचार्यश्री कनकनंदीजी रचित साहित्यों पर शोध (Ph.D. M.Phill) कार्य।

20. अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया आदि देश–विदेश में स्व–वैज्ञानिक शिष्यों द्वारा धर्म प्रभावना।
21. विश्व धर्म सम्मेलन–आस्ट्रेलिया–मेलबोर्न में आचार्यश्री के शिष्य डॉ. कछाराजी द्वारा प्रतिनिधित्व एवं उद्बोधन–विषय जैन दर्शन एवं कर्म सिद्धांत, दिनांक 03.12.2009 से 09.12.2009 तक
22. कषाय पाहुड़ के नवीन संशोधित 1008 प्रतियों का प्रकाशन आचार्यश्री के शिष्य प्रो. प्रभात के द्वारा संशोधन, अर्थ सहयोग अमेरिका के भक्तों द्वारा (नरेन्द्रजी जैन, प्रकाशजी जैन, सौ. सुलोचना जैन, अमेरिका)
23. **जैन दर्शन पर अंग्रेजी में डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म निर्माण**–अभी तक 2 फिल्म का निर्माण हो चुका है, आगे भी फिल्मों का निर्माण होगा।

    आर्थिक सहयोग–लंदन विश्वविद्यालय यूरोप।
24. **ताम्र पत्र में ग्रंथ प्रकाशन**–अभी तक–(i) द्रव्य संग्रह, (ii) हितोपदेश, (iii) तत्त्वार्थ सूत्र (iv) भक्तामर

का प्रकाशन हो गया है और इष्टोपदेश का कार्य चालू है। प्रकाशन अर्थ सौजन्य–प्रो. प्रभात कुमार जैन सपरिवार।

25. **आधा मूल्य में साहित्य विक्रय केन्द्र**–अमेरिका के भक्तों द्वारा गाजियाबाद में प्रो. प्रभात के निर्देशन में आचार्य श्री द्वारा अनुवादित प्राचीन जैन ग्रंथ एवं अन्य प्राचीन ग्रंथों पर। (आधा मूल्य सौजन्य–नरेन्द्र कुमार जैन, अमेरिका)

26. शोधार्थियों को 2 वर्षों तक 10 हजार प्रतिमाह तथा तृतीय वर्ष 15 हजार रुपये प्रतिमाह यू.जी.सी. द्वारा छात्रवृत्ति रूप से सहयोग प्राप्त होता है। शोधकार्य (Ph.D.) के बाद शोधार्थियों को सरकारी उच्च सेवा मिलती है।

आपके स्वैच्छिक सहयोग

1.	संस्थान की वार्षिक सदस्यता केवल	801 रु.
2.	3 वर्ष सदस्यता	2101 रु.
3.	5 वर्ष सदस्यता	3501 रु.
4.	आजीवन सदस्यता	11001 रु.
5.	संरक्षक सदस्यता	15001 रु.
6.	परम संरक्षक सदस्यता	35001 रु.
7.	शिरोमणी संरक्षक सदस्यता	51001 रु.
8.	परम शिरोमणी संरक्षक सदस्यता	100001 रु.

–: सम्पर्क सूत्र :–

डॉ. नारायणलाल कछारा (सचिव)
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)–313001
फोन नं. (0294) 2491422, मो. 9214460622
ई–मेल : nlkachhara@yahoo.com

विश्वविद्यालय से लेकर विश्व धर्म सभा में प्रतिनिधित्व की मंगलमय दीपावली

(आगामी दीक्षा, पिच्छी परिवर्तन, ग्रंथ विमोचन, उपाधि प्रदान, शिविर, विश्व धर्म सम्मेलन में प्रतिनिधित्व, शोध आदि)

परम पूज्य, विराट दृष्टि सम्पन्न वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरूदेव (ससंघ) को नित्य नवीन व ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में शोधपूर्ण एवं उपलब्धियों से भरी दीपावली पर्व को मनाने की शुभयोग धर्मग्राम रामगढ़ में हर्षोउल्लास से सम्पन्न होने जा रहा है। जिसके अन्तर्गत आगामी 21–22–23 नवम्बर 2003 को ब्र. मनीषा दीदी की आर्यिका दीक्षा होगी। जिसमें शांति विधान, गणधरवलय विधान एवं श्रीसंघ का पिच्छी परिवर्तन का कार्यक्रम सम्पन्न होगा। दीक्षा कार्यक्रम के साथ ही आचार्य श्री रचित ''सूक्ष्म जीव विज्ञान से लेकर शुद्ध जीव विज्ञान'' एवं 'हिन्दू धर्म में भी वर्णित समाधि' नाम

ग्रंथ द्वय एवं प्रो. प्रभात द्वारा ताम्र पत्र मुद्रित 'इष्टोपदेश' व श्री तातेड़ जी द्वारा रचित कृति 'Enlightened Knowledge' का भी विमोचन होगा।

इसी तरह आचार्य श्री अपने शुभ कर कमलों से डॉ. तातेड़ जी को 'जैन ज्ञान–विज्ञान मनीषी' इस उपाधि से व डॉ. कछारा जी के मेलबोर्न से वापिस आने पर उन्हें 'जैन ज्ञान–विज्ञान तत्वज्ञ' की उपाधि से अलंकृत करेंगे। प्रो. प्रभात व सुशील जी को पी.एच.डी. प्राप्त होने पर अलंकृत किया जायेगा।

आचार्य श्री ज्ञान–विज्ञान साहित्य शृंखला को विविध विश्वविद्यालयों में कक्ष स्थापना को कराते हुए डॉ. तातेड़ जी को वधर्ममान महावीर वि.वि. मुरादाबाद में शोध निर्देशक के पद पर सुशोभित किया गया है एवं साहित्य कक्ष की स्थापना भी हो चुकी है। शैक्षिक राष्ट्रीय संस्थान यू.जी.सी. में तातेड़ जी को सदस्यता भी प्राप्त हो चुकी है।

अमेरिका निवासी श्री नरेन्द्र जी को

'निस्पृह–उदार–दानश्री व शोध निर्देशक डा. बाबूलाल जी सेठी को 'जैन दर्शन –मनीषी की उपाधि दी जायेगी।

आगामी समय में बैगलुरू शहर में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन शासन व तीर्थ रक्षा कमेटी के संयुक्त तत्वावधान में होने जा रहा है। जिसमें आचार्य श्री के अग्रगण्य शिष्य शिरकत करेंगे। विषय–"अहिंसा–भ. महावीर एवं महात्मा गांधी की दृष्टि में" रहेगा।

शुभकामनाओं सहित

–मुनि सुविज्ञसागर,

संघस्थ आचार्य श्री, रामगढ़ प्रवास से

कआचार्य श्री कनकनन्दी जी के शोधपूर्ण ग्रन्थ

(11.9.2008 से परिवर्तित मूल्य)

I आध्यात्मिक

1.	अनेकान्त सिद्धान्त (द्वि.सं.)	41
2.	अहिंसामृतम (द्वि.सं.)	
3.	अनेकान्त के प्रकाश में मोक्षमार्ग	21
4.	अपुनरागमन पथ : मोक्षमार्ग	05
5.	आदर्श नागरिक की प्रायोगिक क्रियाएँ	10
6.	आहार दान से अभ्युदय	15
7.	उपवास का धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण	25
8.	जीवन्त धर्म सेवा धर्म	15
9.	दिगम्बर साधु का नग्नत्व एवं केंशलोंच (हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू–11 सं.)	10
10.	धर्म, जैन धर्म तथा भ. महावीर	75
11.	बन्धु बन्धन के मूल	51
12.	विनय मोक्षद्वार (द्वि.सं.)	31
13.	विश्व धर्मसभा (समवशरण)	51
14.	क्षमा वीरस्य भूषणम् (तृ.सं.)	35
15.	श्रमण संघ संहिता	61

16.	त्रैलोक्य पूज्य ब्रह्मचर्य (द्वि.सं.)	35
17.	सत्य परमेश्वर	75

II आध्यात्मिक–विज्ञान (गणित)

1.	अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा	201
2.	धर्म विज्ञान बिन्दु	15
3.	धर्म–दर्शन–विज्ञान प्रवेशिका (भाग–1) स.सं.	15
4.	धर्म–दर्शन–विज्ञान प्रवेशिका (भाग–2) स.सं.	20
5.	धर्म–दर्शन–विज्ञान प्रवेशिका (भाग–3) स.सं.	30
6.	धर्म–दर्शन–विज्ञान (द्वि.सं.)	101
7.	ब्रह्माण्डीय जैविक–भौतिक एवं रसायन विज्ञान	151
8.	ब्रह्माण्ड के रहस्य	25
9.	ब्रह्माण्ड एवं प्रतिब्रह्माण्ड : धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण	15
10.	विश्व विज्ञान रहस्य	151
11.	विश्व प्रतिविश्व एवं श्याम : विवर	35
12.	वैज्ञानिक आईन्स्टीन के सिद्धान्तों को पुनः परीक्षण की आवश्यकता	15
13.	ब्रह्माण्ड–काल–आकाश एवं जीव : अनन्त (बड़ा)	201
14.	ब्रह्माण्ड–काल–आकाश एवं जीव : अनन्त (छोटा)	25
15.	सूक्ष्म जीव विज्ञान से शुद्ध जीव विज्ञान	801

III आध्यात्मिक–मनोविज्ञान

1.	अतिमानवीय शक्ति (द्वि.सं.)	51
2.	क्रान्ति के अग्रदूत (द्वि.सं.) (तीर्थङ्कर का धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण)	35
3.	कर्म का दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण (द्वि.सं.)	75
4.	ध्यान का वैज्ञानिक विश्लेषण	51
5.	लेश्या मनोविज्ञान (द्वि.सं.)	21
6.	तत्त्वचिन्तन–सर्व धर्म समता से विश्व शान्ति	51
7.	मानव इतिहास एवं मानव विज्ञान	401

IV शिक्षा–मनोविज्ञान

1.	आचार्य कनकनन्दी की दृष्टि में शिक्षा	11
2.	नैतिक शिक्षा एवं सामान्य ज्ञान	40
3.	सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (वृहत)	401
4.	सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (लघु)	21

V अशोध (धार्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक)

1.	अग्नि परीक्षा	21
2.	अनुभव चिन्तामणि	15

3.	उठो ! जागो ! प्राप्त करो ! (हिन्दी, कन्नड)	11
4.	करें साक्षात्कार यथार्थ सत्य का	50
5.	करें साक्षात्कार यथार्थ धर्म एवं भाव का	40
6.	जैन धर्मावलम्बी संख्या और उपलब्धि	21
7.	जीवन विकास एवं विनाश के सूत्र	21
8.	जैन धर्मावलम्बियों की दिशा–दशा–आशा	5
9.	जैन एकता एवं विश्वशान्ति	5
10.	धार्मिक कुरीतियों का परिशोधन (द्वि.सं.)	10
11.	नग्न सत्य का दिग्दर्शन	25
12.	निकृष्टतम स्वार्थी तथा क्रूरतम प्राणी : मनुष्य	21
13.	प्रथम शोध–बोध–आविष्कारक एवं प्रवक्ता	75
14.	प्राचीन भारत की 72 कलाएँ (द्वि.सं.)	21
15.	भारत को गारत एवं महान भारत बनाने के सूत्र	15
16.	भारत के सर्वोदय के उपाय	5
17.	मानवीय निकृष्ट संघर्ष का इतिहास	10
18.	मेरा लक्ष्य–साधना एवं अनुभव (आचार्य श्री की जीवनी)	10
19.	ये कैसे धर्मात्मा, निर्व्यसनी, राष्ट्रसेवी	21
20.	व्यसन का धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण (च.सं.)	51
21.	विज्ञान को भी अविज्ञात सत्य	20
22.	शाश्वत समस्याओं का समाधान	25

23.	शिक्षा, संस्कृति एवं नारी गरिमा	61
24.	संगठन के सूत्र (द्वि.सं.)	41
25.	संस्कार (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़) 15वां सं.	10
26.	संस्कार (वृहत)	50
27.	सत्यान्वेषी आ. कनकनन्दी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	10
28.	संस्कृति की विकृति	10
29.	संस्कार और हम	35
30.	हिंसा की प्रतिक्रिया है : प्राकृतिक प्रकोपादि (द्वि.सं.)	35
31.	क्षमा वीरस्य भूषणम् (तृ.सं.)	21
32.	विभिन्न क्रम विकासवाद एवं परम आध्यात्मिक विकासवाद	25
33.	भारत की अन्तरङ्ग खोज	10
34.	विभिन्न भावात्मक प्रदूषण एवं भ्रष्टाचार : कारण तथा निवारण	41
35.	वर्तमान की आवश्यकता : धार्मिक उदारता न कि कट्टरता	15
36.	वैश्वीकरण, वैश्विक–धर्म एवं विश्वशान्ति	21
37.	वैज्ञानिक आध्यात्मिक धर्मतीर्थ प्रवर्तन	51
38.	अभी की समस्याएँ–सभी के समाधान	21
39.	मानव धर्म : स्वरूप एवं परिणाम (हिन्दी, मराठी)	15
40.	वैदिक (हिन्दू) धर्म में भी है समाधिमरण (संथारा) का वर्णन	

VI अनुवाद, टीका, समीक्षा (आध्यात्मिक विज्ञान)

1.	इष्टोपदेश (आध्यात्मिक–मनोविज्ञान)	101
2.	पुरूषार्थसिद्ध्युपाय (अहिंसा का विश्व स्परूप)	201
3.	विश्व द्रव्य–विज्ञान (द्रव्य संग्रह)	101
4.	स्वतन्त्रता के सूत्र (मोक्ष शास्त्र/तत्वार्थ सूत्र) द्वि.सं.	201
5.	सत्यसाम्यसुखामृतम् (प्रवचनसार)	601

VII मीमांसा, समालोचना, संकलन

1.	कौन है विश्व का कर्त्ता–हर्त्ता–धर्त्ता ?	21
2.	ज्वलन्त शङ्काओं का शीतल समाधान (द्वि.सं.)	75
3.	जिनार्चना पुष्प–1 (तृ.सं.)	75
4.	जिनार्चना पुष्प–2	21
5.	निमित्त उपादान मीमांसा (द्वि.सं.)	21
6.	पुण्य पाप मीमांसा (द्वि.सं.)	35
7.	पूजा से मोक्ष, पुण्य, पाप भी	41
8.	भाग्य एवं पुरूषार्थ (हिन्दी, मराठी) पं.सं.	15
9.	शोधपूर्ण ग्रन्थ तथा ग्रन्थकर्त्ता आ. कनकनन्दी	10
10.	अमृततत्त्व की उपलब्धि के हेतु समाधि–मरण	40

11.	परोपदेश कुशल बहुतेरे...	5
12.	विविध दीक्षा विधि	31

VIII इतिहास

1.	अयोध्या का पौराणिक, ऐतिहासिक एवं राजनैतिक विश्लेषण	35
2.	ऋषभ पुत्र भरत से भारत (द्वि.सं.)	35
3.	धर्म प्रवर्तक 24 (तीर्थङ्कर (द्वि.सं.)	21
4.	पार्श्वनाथ का तपोपसर्ग कैवल्य धाम : बिजौलिया	35
5.	भारतीय आर्य कौन कहाँ से–कब से कहाँ के ?	50
6.	युग निर्माता भ. ऋषभदेव (द्वि.सं.)	61
7.	युग निर्माता भ. ऋषभदेव (पद्यानुवाद)	5
8.	विश्व इतिहास	51

IX स्मारिका (वैज्ञानिक संगोष्ठी)

1.	कर्म सिद्धान्त और उसके वैज्ञानिक मनोविज्ञान एवं सामाजिक आयाम	60
2.	शिक्षा–शोधक–स्मारिका	100
3.	स्मारिका (स्वतन्त्रता सूत्र में विज्ञान)	81
4.	स्मारिका (स्वतन्त्रता सूत्र में विज्ञान)	51
5.	जैन धर्म के विज्ञान	150

6. भारतीय संस्कृति में विश्व शान्ति और पर्यावरण सुरक्षा के सूत्र 20
7. मन्थन (जैन दर्शन एवं विज्ञान) -

X स्वप्न, शकुन–भविष्य विज्ञान मंत्र सामुद्रिक शास्त्र (शरीर से भविष्य ज्ञान)

1. सर्वाङ्ग विज्ञान की वैज्ञानिक गवेषणा (भाव–भाग्य तथा अङ्ग विज्ञान) 251
2. भविष्य फल विज्ञान (द्वि.सं.) 301
3. मंत्र–विज्ञान (द्वि.सं.) 35
4. शकुन–विज्ञान 75
5. स्वप्न–विज्ञान (द्वि.सं.) 101

XI स्वास्थ्य विज्ञान

1. समग्र स्वास्थ्य के उपाय : तपस्या 25
2. आदर्श विचार–विहार–आहार 75
3. धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान (भाग–1) तृ.सं. 50
4. धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान (भाग–2) 21
5. शारीरिक–मानसिक–आध्यात्मिक स्वास्थ्य के विविध आयाम 201

XII प्रवचन

1. क्रान्ति दृष्टा प्रवचन 11
2. जीने की कला (संवर्द्धित द्वि.सं.) 25
3. भ. महावीर तथा उनका दिव्य सन्देश 5
4. भारत को पुनः विश्वगुरू बनाने के लिए समग्र क्रान्ति चाहिए 11
5. मनन एवं प्रवचन (द्वि.सं.) 10
6. विश्व शान्ति के अमोघः उपाय (द्वि.सं.) 10
7. विश्व धर्म के दस लक्षण 41
8. व्यक्ति एवं समाज निर्माण के आद्य कर्त्तव्य 15
9. शान्ति क्रान्ति के विश्व नेता बनने के उपाय 41
10. समग्र क्रान्ति के उपाय 15
11. भ्रष्टाचार–हिंसा मुक्ति (द्वि.सं.) 25

XIII कथा

1. कथा सुमन मालिका 15
2. कथा सौरभ 21
3. कथा पारिजात 15
4. कथा पुष्पाञ्जली 15
5. कथा चिन्तामणि 15
6. कथा त्रिवेणी 8

XII अंग्रेजी साहित्य

1.	Fate and Efforts (II ed.)	25
2.	Leshya Psychology (II ed.)	21
3.	Moral Education	51
4.	Nakedness of Digamber Jain Saints & Kesh Lonch (III ed.)	21
5.	Sanskars	10
6.	Sculopr the Rishabhdeo	51
7.	Phylosophy of Scientific Religion	51
8.	What kinds of Dharmatma (Piousman) these are	51

XV डॉ. एन.एल.कछारा के साहित्य (संस्थान के सचिव)

1.	जैन कर्म सिद्धान्त : अध्यात्म और विज्ञान	50
2.	समवशरण (आ. कनकनन्दीजी से भेंट वार्ता)	
3.	Jain Doctrine of Karama	35
4.	षट्द्रव्य की वैज्ञानिक मीमांसा	300
5.	जैन दर्शन सम्बन्धी अंग्रेजी में डाक्यूमेन्ट्री फिल्म सी.डी.	

आचार्य श्री के आगामी प्रकाशनाधीन ग्रन्थ

1. सम्पूर्ण कला एवं वाणिज्य, न्याय, राजनीति, अर्थशास्त्र एवं समाज विज्ञान (नीति वाक्यामृतम्)
   (शीघ्र प्रकाशनाधीन) : पृष्ठ प्रायः 1500
2. भारत का दिव्य सन्देश : पृष्ठ लगभग 500 से 750
3. परम्परा, धर्म एवं विज्ञान : परम्पराओं में धर्म क्या है ? अधर्म क्या है ? विज्ञान क्या है ? अविज्ञान क्या है ? यह सिद्ध किया जायेगा। : पृष्ठ प्रायः 100
4. परम पर्यावरण वैज्ञानिक तीर्थकर एवं पर्यावरण की सुरक्षा
   : पृष्ठ प्रायः 400 से 500
5. कल्याणकारक : जैन आयुर्वेद विज्ञान–वैज्ञानिक समीक्षा
   : पृष्ठ प्रायः 1100
6. भाव ही–कल्पवृक्ष, चिन्तामणि, कामधेनु
   : पृष्ठ प्रायः 200

ताम्रपत्र में उत्कीर्ण ग्रन्थ

(ग्रन्थ)	(लागत मूल्य)
1. द्रव्य संग्रह	8500
2. समाधि तंत्र	16000
3. तत्वार्थ सूत्र	52000
4. इष्टोपदेश	
5. भक्तामर स्तोत्र	

ताम्र पत्र के ग्रन्थ लागत मूल्य से भी कम मूल्य में उपलब्ध है।
ताम्र पत्र के ग्रन्थ तथा आधी छूट में आचार्य श्री कनकनन्दीजी के ग्रन्थ एवं प्राचीन ग्रन्थ क्रय करने के लिये सम्पर्क करें।

सम्पर्क सूत्र

1. डॉ. नारायणलाल कछारा
(सचिव)
55, रवीन्द्र नगर,
उदयपुर (राज.) 313 001
फोन : 0294-2491422
मो. : 9214460622
ई-मेल :
nlkachhara@yahoo.com

2. प्रो. प्रभात कुमार जैन
(संघस्थ)
के.एच. 93, एफ.एफ.2
कविनगर,
गाजियाबाद (उ.प्र.) 251002
मो. : 09211541266
9971931442

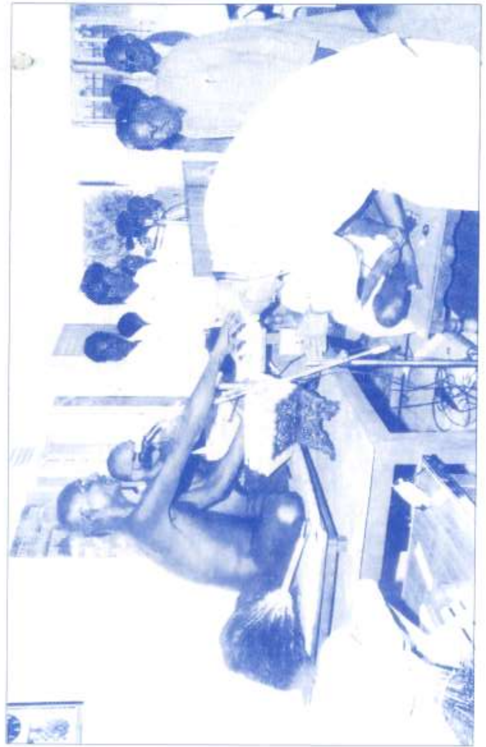

गुरुशरण प्रवज्यामि
राष्ट्रीय समस्यायें एवं समाधान की सर्वधर्म सभा में आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए अशोक सिंहल (कार्याध्यक्ष-विश्व हिन्दू परिषद)

गुरुचरण-वन्दन

11वीं वैज्ञानिक संगोष्ठी (जैन विज्ञान, आधुनिक विज्ञान से परे) में आ. कनकनन्दी के पादप्रक्षालन करते हुए प्रो. प्रभातकुमार, प्रो. सुशीलचन्द, डॉ. कच्छारा, डॉ. तातेड़ (आ. महाप्रज्ञ के भक्त, सम्प्रति उपकुलपति तथा आ. कनकनन्दी के साहित्य के शोध निर्देशक) रामगढ़-2009